वर्ष : 8
अंक : 56
संत श्री आसारामजी आश्रम द्वारा प्रकाशित
6/-
अगस्त 97
ऋषिप्रसाद
जन्माष्टमी 25 अगस्त

ऋषि प्रसाद

वर्ष : ८
अंक : ५६
९ अगस्ट १९९७

सम्पादक : क. रा. पटेल
प्रे. खो. मकवाणा

मूल्य : रू. ६-००

सदस्यता शुल्क
भारत, नेपाल व भूटान में
(१) वार्षिक : रू. ५०/-
(२) आजीवन : रू. ५००/-

विदेशों में
(१) वार्षिक : **US $ 30**
(२) आजीवन : **US $ 300**

कार्यालय
'ऋषि प्रसाद'
श्री योग वेदान्त सेवा समिति
संत श्री आसारामजी आश्रम
साबरमती, अमदावाद-३८० ००५
फोन : (०७९) ७४८६३१०, ७४८६७०२.

प्रकाशक और मुद्रक : क. रा. पटेल
श्री योग वेदान्त सेवा समिति,
संतश्री आसारामजी आश्रम, मोटेरा, साबरमती,
अमदावाद-३८० ००५ ने परिजात प्रिन्टरी एवं भार्मवी प्रिन्टर्स, राणीप, अमदावाद में तथा पूर्वी पिन्टर्स, राजकोट में छपाकर प्रकाशित किया।

केवल जलमय तीर्थ ही तीर्थ नहीं कहलाते और केवल मिट्टी या पत्थर की प्रतिमाएँ ही देवता नहीं होतीं। संत पुरुष ही वास्तव में तीर्थ और देवता हैं, क्योंकि तीर्थ और प्रतिमा का बहुत समय तक सेवन किया जाय, तब वे पवित्र करते हैं परन्तु संत पुरुष तो दर्शनमात्र से ही कृतार्थ कर देते हैं।
(श्रीमद्भागवत)

प्रस्तुत है...

१. साधना-प्रकाश ... २
★ मंत्रजप की महिमा एवं अनुष्ठान विधि
२. आंतर-आलोक ... ५
★ 'हम कभी कुछ करते नहीं' : श्रीकृष्ण
३. सत्संग-सरिता ... ६
★ परमात्म-प्राप्ति के सात सचोट उपाय
४. संत-महिमा ... ८
★ बड़े कृपालु होते हैं ब्रह्मवेत्ता सत्पुरुष
५. भक्ति-भागिरथी ... ११
★ गोपियों की अनन्य प्रीति
६. ज्ञान-सोपान ... १३
★ तत्त्वदर्शन
७. आत्म-प्रसाद ... १५
★ सच्चे सत्ताधीश से प्रीति
८. प्रेरक प्रसंग ... १८
★ समर्थजी का सामथ्य ★धन्य धन्य यह अनुपम त्याग...
९. जीवन-सौरभ ... २१
★ उदारात्मा जयदेवजी महाराज
१०. संतवाणी ... २५
★ गर्भपात महापाप
११. युवा जागृति सन्देश ... २८
★ सफलता की छ : कुँजियाँ
१२. शरीर-स्वास्थ्य ... २९
★ तुलसी
१३. संस्था समाचार ... ३१

पूज्यश्री के दर्शन-सत्संग : ATN चैनल पर रोज सुबह ७.३० से ८. ZEE टी.वी. चैनल पर रोज सुबह ७ से ७.३०.

'ऋषि प्रसाद' के सदस्यों से निवेदन है कि कार्यालय के साथ पत्रव्यवहार करते समय अपना रसीद क्रमांक एवं स्थायी सदस्य क्रमांक अवश्य बतायें।

मंत्रजप की महिमा एवं अनुष्ठान विधि

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

श्रीरामचरितमानस में नाम-जप की महिमा का वर्णन करते हुए गोस्वामी तुलसीदासजी ने कहा है :

कृतजुग त्रेताँ द्वापर पूजा मख अरु जोग ।
जो गति होइ सो कलि हरि नाम ते पावहिं लोग ॥

'सतयुग, त्रेता और द्वापर में जो गति पूजा, यज्ञ और योग से प्राप्त होती है, वही गति कलियुग में लोग भगवान के नाम से पा लेते हैं।'

(श्रीरामचरित० उत्तरकाण्ड : १०२ ख)

कलियुग में ईश्वर के नाम का जप ही एकमात्र तारणहार है। **जप = 'ज' माने जन्म का विच्छेदक और 'प' माने पाप का नाशक।**

जकारः जन्मविच्छेदः पकारः पापनाशकः ।

नाम को निर्गुण (ब्रह्म) एवं सगुण (राम) से भी बड़ा बताते हुए तुलसीदासजी ने तो यहाँ तक कह दिया कि :

अगुन सगुन दुइ ब्रह्म सरूपा ।
अकथ अगाध अनादि अनूपा ॥
मोरे मत बड़ नामु दुहू तें ।
किए जेहिं जुग निज बस निज बूतें ॥

ब्रह्म के दो स्वरूप हैं : निर्गुण और सगुण। ये दोनों ही अकथनीय, अथाह, अनादि और अनुपम हैं। मेरी मति में नाम इन दोनों से बड़ा है, जिसने अपने बल से दोनों को वश में कर रखा है।'

(श्रीरामचरित० बालकाण्ड : २२,१)

नाम जीहँ जपि जागहिं जोगी ।
बिरति बिरंचि प्रपंच बियोगी ॥
ब्रह्मसुखहि अनुभवहिं अनूपा ।
अकथ अनामय नाम न रूपा ॥

'ब्रह्मा के बनाये हुए इस प्रपंच (दृश्य जगत) से भलिभाँति छूटे हुए वैराग्यवान् मुक्त योगी पुरुष इस नाम को ही जीभ से जपते हुए (तत्त्वज्ञानरूपी दिन में) जागते हैं और नाम तथा रूप से रहित अनुपम, अनिर्वचनीय, अनामय, ब्रह्मसुख का अनुभव करते हैं।'

(श्रीरामचरित० बालकाण्ड : २१,१)

जाना चहहिं गूढ़ गति जेऊ ।
नाम जीहँ जपि जानहिं तेऊ ॥
साधक नाम जपहिं लय लाएँ ।
होहिं सिद्ध अनिमादिक पाएँ ॥

'जो परमात्मा के गूढ़ रहस्य को जानना चाहते हैं, वे जिज्ञासु भी नाम को जपकर उसे जान लेते हैं। सिद्धियों के अभिलाषी साधक भी लौ लगाकर नाम का जाप करते हैं और अणिमादि लौकिक सिद्धियों को पाकर सिद्ध हो जाते है।'

(श्रीरामचरित० बालकाण्ड : २१,२)

इसी प्रकार,

राम भगत जग चारि प्रकारा ।
सुकृति चरिउ अनघ उदारा ॥
चहू चतुर कहुँ नाम अधारा ।
ग्यानी प्रभुहि बिसेषि पिआरा ॥

'जगत में चार प्रकार के भक्त हैं : अर्थार्थी, आर्त, जिज्ञासु और ज्ञानी। ये चारों ही पुण्यात्मा, पापरहित और उदार हैं। इन चारों को नाम का ही आधार है। इनमें ज्ञानी भक्त (भगवान को तत्त्व से जानकर स्वाभाविक ही प्रेम से भजनेवाले) प्रभु को विशेष रूप से प्रिय हैं।'

चहुँ जुग चहुँ श्रुति नाम प्रभाऊ ।
कलि बिसेषि नहिं आन उपाऊ ॥

'यों तो चारों युगों में और चारों ही वेदों में नाम का प्रभाव है किन्तु कलियुग में विशेष रूप से है। इसमें तो नाम को छोड़कर दूसरा कोई उपाय ही नहीं है।'

(श्रीरामचरित० बालकाण्ड : २१,३-४)

नाम को राम से भी अधिक बताते हुए तुलसीदासजी ने कहा :

सबरी गीध सुसेवकनि सुगति दीन्हि रघुनाथ ।
नाम उधारे अमित खल बेद बिदित गुन गाथ ॥

'श्रीरघुनाथजी ने तो शबरी, जटायु आदि उत्तम सेवकों को ही मुक्ति दी, परंतु नाम ने अगनित दुष्टों का भी उद्धार किया। नाम के गुणों की कथा वेदों में भी प्रसिद्ध है।'

(श्रीरामचरित० बालकाण्ड : २४)

अपतु अजामिल, गजु गनिकाऊ ।
भए मुकुत हरि नाम प्रभाऊ ॥
कहौं कहाँ लगि नाम बड़ाई ।
रामु न सकहिं नाम गुन गाई ॥

'नीच अजामिल, गज और गणिका भी श्रीहरि के नाम के प्रभाव से मुक्त हो गये। मैं नाम की बड़ाई कहाँ तक कहूँ ? राम भी नाम के गुणों को नहीं गा सकते।'

(श्रीरामचरित० बालकाण्ड : २५,४)

भगवान श्रीकृष्ण ने गीता में कहा है :

यज्ञानां जपयज्ञोऽस्मि।

'यज्ञों में जपयज्ञ मैं हूँ।'

भगवान श्रीराम ने भी 'श्रीरामचरितमानस' में शबरी के समक्ष नवधा भक्ति का वर्णन करते हुए कहा :

मंत्र जाप मम दृढ़ बिस्वासा ।
पंचम भजन सो बेद प्रकासा ॥

अर्थात् 'मंत्र का जाप और मुझमें दृढ़ विश्वास यह पाँचवीं भक्ति है।'

इस प्रकार शास्त्रों में मंत्रजाप की अद्भुत महिमा बतायी गई है। मंत्र का नियमपूर्वक जाप करने से साधक अनेक ऊँचाइयों को पा लेता है एवं संसार के समस्त दुःखों से मुक्त हो जाता है। तुकारामजी महाराज कहते हैं :

''नाम से बढ़कर कोई भी साधना नहीं है। तुम और जो चाहो सो करो, पर नाम लेते रहो। इसमें भूल न हो। यही सबसे पुकार-पुकार कर मेरा कहना है। अन्य किसी साधन की कोई जरूरत नहीं है। बस, निष्ठा के साथ नाम जपते रहो।''

जिसको गुरुमंत्र मिला है और जिसने ठीक ढंग से जप किया है, वह कितने भी भयानक स्मशान में से चलकर निकल जाये, भूत-प्रेत उसका कुछ भी नहीं बिगाड़ सकते। उसे कोई अनिष्ट नहीं सता सकते। प्रायः उन्हीं निगुरे लोगों को भूत-प्रेत सताते हैं, जो प्रदोष काल में भी भोजन और मैथुन का त्याग नहीं करते एवं गुरुमंत्र का जाप नहीं करते।

मंत्रजाप करने से मनुष्य के अनेक पाप-ताप भस्म होने लगते हैं। उसका हृदय शुद्ध होने लगता है और ऐसा करते-करते एक दिन उसके हृदय में हृदयेश्वर का प्रागट्य भी हो जाता है।

मंत्रजाप से चित्त पावन होता है, रक्त के कण पवित्र होते हैं, दुःख, चिंता, शोक, भय निवृत्त होते हैं एवं सुख-समृद्धि तथा सफलता की प्राप्ति में मदद मिलती है। यहाँ तक कि जप से जीवात्मा परब्रह्म-परमात्मपद में पहुँचने की क्षमता भी विकसित कर लेता है।

जपात् सिद्धिः जपात् सिद्धिः जपात् सिद्धिर्न संशयः।

मंत्र दिखने में तो बहुत छोटा दिखाई देता है लेकिन उसका प्रभाव बहुत बड़ा होता है। हमारे पूर्वज ऋषि-मुनियों ने मंत्र के बल पर रिद्धि-सिद्धि व इतनी बड़ी चिरस्थायी ख्याति प्राप्त की है।

मंत्र एक ऐसा साधन है जो हमारे भीतर की सोयी हुई चेतना को जगा देता है, हमारी महानता को प्रकट कर देता है और हमारी सुषुप्त शक्तियों को विकसित कर देता है।

अनुष्ठान की विधि

अपने इष्टमंत्र या गुरुमंत्र में जितने अक्षर हों उतने लाख मंत्रजप करने से उस मंत्र का अनुष्ठान पूरा होता है। मंत्रजप हो जाने के बाद उसका दशांश संख्या में हवन, हवन का दशांश तर्पण, तर्पण का दशांश मार्जन और मार्जन का दशांश ब्रह्मभोज कराना होता है। यदि हवन, तर्पणादि करने का सामर्थ्य या अनुकूलता न हो तो हवन, तर्पणादि के बदले उतनी संख्या में अधिक जप करने से भी काम चलता है। उदाहरणार्थ : यदि एक अक्षर का मंत्र हो तो १००००० + १०००० + १००० + १०० + १० =१,११,११० मंत्रजाप करने से सब विधियाँ पूरी मानी जाती हैं।

अनुष्ठान के प्रारंभ में ही जप की संख्या का निर्धारण कर लेना चाहिए एवं प्रतिदिन नियत स्थान पर बैठकर, निश्चित समय में, निश्चित संख्या में जप करना चाहिए।

सुविधा के लिए यहाँ एक अक्षर (ॐ) के मंत्र से लेकर सात अक्षर के मंत्र की नियत दिनों में कितनी मालाएँ की जानी चाहिए, उनकी तालिका यहाँ दी जा रही है :

अनुष्ठान हेतु प्रतिदिन की माला की संख्या

	कितने दिन में अनुष्ठान पूरा करना है ?					
मंत्र के अक्षर	७ दिन में	९ दिन में	११ दिन में	१५ दिन में	२१ दिन में	४० दिन में
एक अक्षर का मंत्र	१५० माला	११५ माला	९५ माला	७० माला	५० माला	३० माला
दो अक्षर का मंत्र	३०० माला	२३० माला	१९० माला	१४० माला	१०० माला	६० माला
तीन अक्षर का मंत्र	४५० माला	३४५ माला	२८५ माला	२१० माला	१५० माला	९० माला
चार अक्षर का मंत्र	६०० माला	४६० माला	३८० माला	२८० माला	२०० माला	१२० माला
पाँच अक्षर का मंत्र	७५० माला	५७५ माला	४७५ माला	३५० माला	२५० माला	१५० माला
छः अक्षर का मंत्र	९०० माला	६९० माला	५७० माला	४२० माला	३०० माला	१८० माला
सात अक्षर का मंत्र	१०५० माला	८०५ माला	६६५ माला	४९० माला	३५० माला	२१० माला

अपने मंत्र के अक्षरों की संख्या के आधार पर उपरोक्त तालिका के अनुसार अपनी जप की संख्या निर्धारित करके, रोज निश्चित संख्या में ही माला करें। कभी कम कभी ज्यादा... ऐसा नहीं।

मंत्र संख्या का निर्धारण : कई लोग 'ॐ' को 'ओम' के रूप में दो अक्षर मान लेते हैं और 'नमः' को 'नमह' के रूप में तीन अक्षर मान लेते हैं। वास्तव में ऐसा नहीं है। 'ॐ' एक अक्षर है और 'नमः' दो अक्षर हैं। इसी प्रकार कई लोग 'ॐ हरि' या 'ॐ राम' को केवल दो अक्षर मानते हैं जबकि ॐ... ह... रि... इस प्रकार तीन अक्षर होते हैं, ऐसा ही 'ॐ राम' के संदर्भ में भी समझना चाहिए। अतः संख्या-निर्धारण में भी सावधानी रखनी चाहिए।

जप कैसे करें ? : जप में मंत्र का स्पष्ट उच्चारण करें। जप में न बहुत जल्दबाजी करनी चाहिए और न बहुत विलम्ब। गाकर जपना, सिर हिलाना, लिखा हुआ पढ़ना, मंत्र का अर्थ न जानना और बीच में भूल जाना... ये सब मंत्रसिद्धि के प्रतिबंधक हैं। जप के समय यह चिंतन रहना चाहिए कि इष्ट देवता, मंत्र और गुरुदेव एक ही हैं।

जप पवित्र स्थान पर, कंबल आदि विद्युत के अवाहक आसन पर बैठकर शांत मन से करें।

अनुष्ठान के दिनों में आहार बिल्कुल सादा, सात्त्विक, हल्का एवं पौष्टिक होना चाहिए। जितना अधिक से अधिक मौन का पालन हो सके, उतना अच्छा है।

अनुष्ठान के दिनों में पूर्णतया ब्रह्मचर्य का पालन जरूरी है। अनुष्ठान से पहले आश्रम से प्रकाशित 'यौवन सुरक्षा' पुस्तक का गहरा अध्ययन लाभकारी होगा।

भूमिशयन, निद्रा-तंद्रा-मनोराज से बचना, स्वच्छता एवं पवित्रता का ध्यान रखना भी अनुष्ठान के दिनों में विशेष आवश्यक है।

स्त्रियों को अनुष्ठान के उतने ही दिन आयोजित करने चाहिए, जितने दिन उनका हाथ स्वच्छ हो। मासिक धर्म के समय में अनुष्ठान खण्डित हो जाता है।

अनुष्ठान संबंधी विस्तृत जानकारी के लिए आश्रम से प्रकाशित 'इष्टसिद्धि' पुस्तक का अध्ययन अवश्य करें।

विधिपूर्वक किया गया गुरुमंत्र का अनुष्ठान साधक के तन को स्वस्थ, मन को प्रसन्न एवं बुद्धि को सूक्ष्म करने में तथा जीवन को जीवनदाता के सौरभ से महकाने में सहायक होता है। जितना अधिक जप उतना अधिक फल। **अधिकस्य अधिकं फलम्।** यह सदैव याद रखें।

मंत्रजाप संबंधी कुछ आवश्यक बातें

★ जननाशौच (संतान-जन्म के समय लगनेवाला अशौच-सूतक) के समय प्रसूतिका स्त्री (माता) ४० दिन तक माला लेकर जप नहीं कर सकती है एवं पिता १० दिनों तक।

★ मरणाशौच (मृत्यु के समय लगनेवाला अशौच)

(शेष पृष्ठ १२ पर)

'हम कभी कुछ करते नहीं ' : श्रीकृष्ण

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

कर्त्ता-भोक्ता का परिच्छिन्न अहं अज्ञानी का ही होता है। अकर्त्ता-अभोक्ता ब्रह्म में जगे हुए महापुरुष को कर्त्तृत्व-भोक्तृत्व की परिच्छिन्न भ्रांति नहीं होती। वास्तविक 'मैं' में जगे हुए वे अकर्त्ता-अभोक्ता के आनंदस्वरूप में प्रतिष्ठित होते हैं।

एक बार ग्वाल-गोपियों ने श्रीकृष्ण से कहा :

''कन्हैया ! तुमने तो आज बड़ी देर कर दी। कहाँ गये थे ?''

श्रीकृष्ण : ''मैं गुरुदेव के पास गया था।''

''तुम्हारे गुरु के दर्शन हमें भी कराओ।''

''जाओ, जरूर जाओ।''

''किन्तु यमुनाजी तो पूरे वेग से बह रही हैं।''

तब श्रीकृष्ण ने जरा-सी मिट्टी देते हुए कहा :

''जाओ, यमुनाजी में इसे डालकर कहना कि कृष्ण ने कभी कुछ न किया हो तो हमें रास्ता दे दो।''

गोपियों ने श्रीकृष्ण के कहे अनुसार किया तो सचमुच यमुनाजी ने मार्ग दे दिया।

गोपियाँ पहुँची दुर्वासाजी के पास और उनके श्रीचरणों में भिन्न-भिन्न प्रसाद चढ़ाया।

दुर्वासाजी सारा प्रसाद खा गये। जब वापस लौटने लगीं तब गोपियों ने कहा :

''महाराज ! जब हम आये थे तब तो श्रीकृष्ण ने मिट्टी देते हुए कहा था कि यमुनाजी से कहना कि 'कृष्ण ने कभी कुछ न किया हो तो रास्ता दे दो' और यमुनाजी ने रास्ता दे दिया। किन्तु अब हम कैसे वापस जायें ? ''

दुर्वासाजी बोले : ''इस धूने में से थोड़ी भभूत ले जाओ और यमुनाजी से कहना कि दुर्वासाजी ने कभी कुछ न खाया हो तो रास्ता दे दो।''

गोपियों का आश्चर्य बढ़ गया ! फिर भी आज्ञा के अनुसार जाकर यमुनाजी से कहा तो यमुनाजी ने रास्ता दे दिया। जब गोपियाँ प्रवाह के बीच में पहुँची तो कहने लगीं :

''कन्हैया तो गप्पीदास है ही, वह तो झूठ बोलता ही है, किन्तु उनके गुरु भी झूठ बोलते हैं और हे यमुने ! तू भी उन झूठों को सहायता करती है ?''

इतने में तो यमुनाजी का वेग बढ़ा और सब गोपियाँ गोते खाने लगीं। घबराते हुए बोली :

''अरे ! अरे ! यमुने ! तू भी सच्ची, कन्हैया भी सच्चा, कन्हैया के गुरु दुर्वासाजी भी सच्चे... दया कर, हमें माफ कर दे।''

यमुनाजी का वेग थोड़ा कम हुआ और गोपियाँ किनारे पर आ गयीं। फिर सारी घटना श्रीकृष्ण को सुनाते हुए गोपियाँ बोली :

''कन्हैया ! तुम रोज तो किसीकी मक्खन की मटकियाँ फोड़ते हो, किसीकी चोटी खींचते हो... और तुम्हारे दुर्वासाजी इतना सारा खा गये... फिर भी तुम कहते हो कि 'मैंने कभी कुछ न किया हो तो...' दुर्वासाजी भी कहते हैं कि 'मैंने कभी कुछ न खाया हो तो...' और तुम लोगों के कहने पर यमुनाजी मार्ग भी दे देती हैं। आखिर इसमें कौन-सा रहस्य है ?''

तब श्रीकृष्ण बोले : ''तुम लोग क्षुद्र 'मैं' को... रक्त, मल-मूत्र आदि से भरे इस शरीररूपी थैले को अपना वास्तविक 'मैं' मानते हो और उसका किया अपना किया मानते हो, जबकि हम अपने को शुद्ध-बुद्ध चैतन्य आत्मा जानते हैं। आत्मा सत्ता मात्र है। वह स्वयं कुछ नहीं करता। इसीलिए हम कहते हैं कि 'हमने कभी कुछ नहीं किया... कुछ नहीं खाया...।

जो सहज स्वाभाविक चैतन्य है उसे जिसने 'मैं' के रूप में जान लिया है वह तमाम प्रवृत्तियाँ करते हुए, खाते-पीते, लेते-देते, उठते-बैठते हुए भी कुछ नहीं करता। व्यवहार शरीर के द्वारा होता है और शरीर है प्रकृति का जबकि वह वास्तविक रूप में ब्रह्म ज्यों-का-त्यों है। उसमें

(शेष पृष्ठ २८ पर)

परमात्म-प्राप्ति के सात सचोट उपाय

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

कथा कीर्तन कलियुगे, भवसागर की नाव ।
कह कबीर भव तरन को और नाहि उपाय ॥

कलियुग में परमात्म-प्राप्ति के लिए वे साधन, वातावरण अथवा शरीर अभी आपके पास नहीं है जो अन्य युगों में थे जिससे तप करके, समाधि करके परमात्म-प्राप्ति की जा सके । इसका मतलब यह भी नहीं है कि कलियुग में परमात्मा को प्राप्त नहीं किया जा सकता। मनुष्य जन्म का उद्देश्य ही परमात्म-साक्षात्कार कर मुक्ति प्राप्त करना है। इस कलिकाल में भी परमात्म-प्राप्ति के कुछ सचोट व सुगम उपाय हैं :

यदि सज्जन व्यक्ति भी दुर्जन का अधिक संग करे तो उसे कुसंग का रंग अवश्य लग जायेगा । इसी प्रकार यदि दुर्जन से दुर्जन व्यक्ति भी महापुरुषों का सान्निध्य ले तो देर-सबेर वह भी महापुरुष हो जायेगा ।

प्रथम उपाय : परमात्म तत्त्व की कथा का श्रवण करें।

कथा कीर्तन जा घर भयो, संत भये मेहमान ।
वा घर प्रभु वासा कीन्हा, वो घर है वैकुण्ठ समान ॥

एक पंडितजी कथा कर रहे थे । कथा के बीच में उन्होंने कहा : **राम नाम भव सिंधु तरहि ।** राम नाम ऐसा है कि वह भवसिंधु से तार देता है।

एक ग्वालिन दूध बेचकर वहाँ से गुजर रही थी । उसके कान में कथा की यह बात आ गई कि 'राम नाम भवसिंधु तार देता है।' वह ग्वालिन दो घड़े सिर पर रखकर दूध बेचने जाती और लौटते समय उन खाली घड़ों में सामान भर लेती थी । उस दिन लौटते समय नदी के किनारे पर पहुँचकर वह सोचने लगी : 'आज नाववाला नहीं है और पंडितजी ने कथा में कहा था कि 'राम नाम भवसिंधु तार देता है... राम नाम से तो पत्थर भी तैरते हैं।' दूध बेचनेवाली उस ग्वालिन ने आगे सोचा : 'पत्थर भी तैर सकते हैं, फिर मैं तो मनुष्य हूँ। पानी में पत्थर जितना भार तो मनुष्य का होता भी नहीं ।'

'जय श्रीराम' करके वह तो चल पड़ी नदी में। ऐसी चली ऐसी चली कि जाकर दूसरे किनारे लगी। उसने सोचा : 'हाय राम ! रोज-रोज इतना पैसा मैं नाववाले को देती थी ! अब वे पैसे पंडितजी की कथा में चढ़ाऊँगी ।' अब वह ग्वालिन नाव के बजाय रोज रामनाम के बल पर नदी पार करके दूध बेचने जाने लगी । नाव के पैसे बचने लगे । आने का पैसा और जाने का पैसा दोनों इकट्ठा करते-करते जब एक महीना बीत गया, तब वह पोटली भरकर पंडितजी के पास गई। पंडित ने कहा : ''इतना सारा पैसा !'' ग्वालिन बोली : ''पंडितजी ! आपके वचन से मुझे लाभ हुआ है।''

पंडितजी : ''कैसे वचन ?''

माई बोली : ''पंडितजी ! आपने कथा में कहा था कि **राम नाम भव सिंधु तरहिं ।''**

राम नाम से मनुष्य भव-सागर तर जाता है। आपके ये वचन मैंने सुने तब से मैं नाव में नहीं बैठती। रोज पानी पर चलकर नदी पार कर लेती हूँ। नदी में डूबती नहीं हूँ। पानी तो लोगों को दिखता है पर मेरे लिए तो मानो... बस, क्या कहूँ... महाराज !'' इतना कहकर माई गद्‌गद् हो गई।

पंडित ने सोचा : 'अरे ! मेरी कथा से ग्वालिन का रोज आने-जाने का खर्च बच रहा है ! मुझे भी उस गाँव में जाना है।' दो दिन बाद पंडितजी नदी किनारे पहुँच गये।

इतने में माई आई और 'जय श्रीराम' कहकर चल पड़ी । माई को देखकर पंडित के आश्चर्य का ठिकाना न रहा ! उन्होंने अपने दो-चार आदमियों को बुलाकर कहा :

''देखो, राम-नाम में शक्ति तो है। मैं भी राम-नाम लेकर तर तो जाऊँगा लेकिन यदि गड़बड़ हो तो मेरी कमर

में तुम रस्सी बाँध दो, अगर डूबने लगूँ तो तुम मुझे खींच लेना।''

पंडित और मसालची दोनों बूझे नाहिं।
औरों को उजाला करे आप अंधेरे माहिं॥

वह माई पंडित के वचन पर श्रद्धा करके बिना नाव के नदी पार कर जाती थी लेकिन पंडित वर्षों से भागवत की कथा करता था पर भगवत्तत्त्व का, रामतत्त्व का ज्ञान नहीं था। उसमें संशय था।

'राम-राम' कहकर नदी में उतरते ही वह तो डूबने लगा। लोगों ने रस्सी खींचकर उसे बाहर निकाला।

संशय सबको खात है
संशय सबका पीर।
संशय की जो फाकी करे
वा का ना फकीर॥

यदि मंत्र किसी ब्रह्मवेत्ता सद्गुरु द्वारा प्राप्त हो और नियमपूर्वक उसका जप किया जाय तो कितना भी दुष्ट अथवा भोगी व्यक्ति हो, जीवन बदल जायेगा। दुष्ट की दुष्टता सज्जनता में बदल जाएगी, भोगी का भोग योग में बदल जायेगा।

दूसरा उपाय : परमात्मप्राप्ति के लिए दूसरी बात है सत्पुरुषों के सान्निध्य में रहें। **जैसा संग वैसा रंग।** संग का रंग अवश्य लगता है। यदि सज्जन व्यक्ति भी दुर्जन का अधिक संग करे तो उसे कुसंग का रंग अवश्य लग जायेगा। इसी प्रकार यदि दुर्जन से दुर्जन व्यक्ति भी महापुरुषों का सान्निध्य ले तो देर-सबेर वह भी महापुरुष हो जायेगा। वालिया लुटेरे ने नारदजी का संग किया और महर्षि वाल्मीकि बन गया।

तीसरा उपाय : प्रेमपूर्वक नामजप-संकीर्तन करें। तुलसीदासजी कहते हैं :

मंत्र जाप मम दृढ़ बिस्वासा।
पंचम भजन सो बेद प्रकासा॥

यदि मंत्र किसी ब्रह्मवेत्ता सद्गुरु द्वारा प्राप्त हो और नियमपूर्वक उसका जप किया जाय तो कितना भी दुष्ट अथवा भोगी व्यक्ति हो, उसका जीवन बदल जायेगा। दुष्ट की दुष्टता सज्जनता में बदल जाएगी। भोगी का भोग योग में बदल जायेगा।

चौथा उपाय : प्रसन्न चित्त से सुख-दुःख को भगवान का विधान समझें। परिस्थितियों को आने जानेवाली समझकर बीतने दें। घबड़ायें नहीं या आकर्षित न होवें।

भगवान श्रीकृष्ण गीता में कहते हैं :

समदुःखसुखः क्षमी।

जिनको अपने आत्मा का प्रकाश नहीं है ऐसे मनुष्य सुख में भी स्वस्थ नहीं रहते और दुःख में भी स्वस्थ नहीं रहते। सुख आये तो उसे टिकाये रखना चाहते हैं और दुःख को दूर करना चाहते हैं। इसलिए सुख और दुःख दोनों में अस्वस्थ रहते हैं लेकिन जिनको आत्मा का प्रकाश मिला है वे सुख-दुःख में स्वस्थ रहते हैं। जो स्वस्थ है उसको दुःख भयभीत नहीं कर सकता। जो संपूर्ण स्वस्थ है, वह जहर को भी पचा लेता है। भीम को जहर दिया गया तो उसकी शक्ति और बढ़ गयी।

जो स्वस्थ हैं उनको संसार में जहर के कड़वे घूँट मिलें तो भी उनकी योग्यता बढ़ती है और संसार का प्यार मिले तो भी वे आनंद में रहते हैं। भक्तिमति मीरा को जहर का प्याला मिला फिर भी वे स्वस्थ रहीं तो जहर भी उनके लिए अमृत बन गया और वे **'मेरे तो गिरिधर गोपाल दूसरो न कोई...'** कहकर कन्हैया के प्रेम में ही मस्त रहीं।

प्रसन्न चित्त से सुख-दुःख को भगवान का प्रसाद समझते हुए सम रहना योग है।

मुस्कुराकर गम का जहर, जिनको पीना आ गया।
यह हकीकत है कि जहाँ में उनको जीना आ गया॥

पाँचवाँ उपाय : सबको भगवान का अंश मानकर सबके हित की भावना करें। मनुष्य जैसा सोचता है वैसा ही हो जाता है इसलिए कभी शत्रु का भी बुरा नहीं सोचना चाहिये बल्कि प्रार्थना करनी चाहिये कि परमात्मा उसे सद्बुद्धि दें, सन्मार्ग दिखायें। ऐसी भावना करने से शत्रु की शत्रुता भी मित्रता में बदल सकती है।

छठा उपाय : ईश्वर को जानने की उत्कण्ठा जागृत करें। **जहाँ चाह वहाँ राह।** जिसके हृदय में ईश्वर के लिए चाह होगी, उस रसस्वरूप को जानने की जिज्ञासा होगी, उस आनन्दस्वरूप के आनंद के आस्वादन की तड़प होगी, प्यास होगी वह अवश्य ही परमात्म-प्रेरणा से संतों के द्वार

(शेष पृष्ठ २० पर)

बड़े कृपालु होते हैं ब्रह्मवेत्ता सत्पुरुष

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

योगिनामपि सर्वेषां मद्गतेनान्तरात्मना ।
श्रद्धावान्भजते यो मां स मे युक्ततमो मतः ॥

'सब योगियों में भी जो श्रद्धावान् योगी मुझ में एकत्वभाव से स्थित होता है, वह मुझे सर्वश्रेष्ठ मान्य है।' (गीता : ६.४७)

अपनी-अपनी जगह पर योगियों का, उनके योगसामर्थ्य का महत्त्व तो है लेकिन भगवान के 'माम्' के साथ जो तदाकार हो जाता है वह श्रेष्ठ योगी माना जाता है।

गंगा में स्नान करने से पाप की निवृत्ति, चंद्रमा की चाँदनी में आने से ताप की निवृत्ति और कल्पवृक्ष मिलने से दरिद्रता की निवृत्ति बतायी गयी है लेकिन कल्पवृक्ष मिलने से धन मिल जाता है, बाहर की दरिद्रता मिटती है किन्तु हृदय की दरिद्रता तो फिर भी मौजूद रहती है। जबकि सत्संग से ये तीनों काम एक साथ हो जाते हैं।

गंगा पापं शशि तापं दैन्यं कल्पतरूस्तथा ।
पापं तापं च दैन्यं च घ्नन्ति संतो महाशयाः ॥

संतों के संग से पाप, ताप और दिल की दरिद्रता सदा-सदा के लिए काफूर हो जाती है क्योंकि संत आत्मलाभ को पाये हुए होते हैं, आत्मसुख को पाये हुए होते हैं, आत्मज्ञान को पाये हुए होते हैं और आत्मज्ञान से बड़ा कोई ज्ञान नहीं है, आत्मसुख से बड़ा कोई सुख नहीं है, आत्मलाभ से बढ़कर कोई लाभ नहीं है।

आत्मलाभात् परं लाभं न विद्यते ।
आत्मसुखात् परं सुखं न विद्यते ।
आत्मज्ञानात् परं ज्ञानं न विद्यते ।

दुनिया में बहुत-से लोग आदर करने योग्य हैं। जैसे कि विद्वान, पंडित, धनवान, बलवान, यशस्वी, सदाचारी आदि आदि। लेकिन इन सबके बीच अगर ब्रह्मवेत्ता आ जाता है तो ये सब उनके समक्ष नन्हें हो जाते हैं। जैसे, अन्य प्राणियों के समक्ष हाथी बड़ा होता है किन्तु हाथी भी हिमालय के आगे तो नन्हा ही है, वैसे ही राजा-महाराजाओं के आगे इन्द्र बड़े हैं किन्तु आत्मज्ञानरूपी हिमालय के आगे तो इन्द्र भी नन्हें ही हैं। और लोग- धनी, तपी, जपी, विद्वान आदि तो सभा में मान करने योग्य होते हैं जबकि ब्रह्मवेत्ता महापुरुष तो पूजने योग्य होते हैं। उनकी चरणरज भी आदर करने योग्य होती है। ऐसा है ब्रह्मज्ञान !

संतों के संग से पाप, ताप और दिल की दरिद्रता सदा-सदा के लिए काफूर हो जाती है क्योंकि संत आत्मलाभ को, आत्मज्ञान को पाये हुए होते हैं और आत्मज्ञान से, आत्मलाभ से बढ़कर कोई लाभ नहीं है।

भगवान श्रीराम कितने बुद्धिमान होंगे कि जिन्होंने मात्र १६ वर्ष की उम्र में ही अपने जीवन का परमलाभ आत्मलाभ पा लिया ! उन्होंने गुरुवर वशिष्ठजी के चरणों में बैठकर ब्रह्मविद्या पा ली। रामावतार में जो 'तत्त्वमसि' के रूप में सुना, वही कृष्णावतार में 'अहं ब्रह्मास्मि' के रूप में छलका और श्रीमद्भगवद्गीता के रूप में प्रसिद्ध हुआ। अगर तीन मिनट के लिए भी इस ब्रह्मविद्या की अनुभूति हो जाये तो फिर इन्द्रपद भी तुच्छ लगने लगता है।

एक माई ने और उसके पति ने संकल्प किया कि 'हम लोग चारों धाम की यात्रा करेंगे और चौरासी सौ ब्राह्मणों को भोजन करायेंगे।' किन्तु दैवयोग से पति मर गया एवं मुनीमों ने बेईमानी करके उसका सारा माल हड़प कर लिया। कुछ ही वर्षों में उस माई को मजदूरी करके अपनी जीविका चलाने के लिए विवश होना पड़ा। उसको खटका रहने लगा कि 'हमने संकल्प किया था चौरासी सौ ब्राह्मणों को भोजन करवाने का एवं चार धाम की यात्रा करने का। अब उसका क्या होगा ?'

चतुर्मास आने पर उस गाँव में कोई दण्डी संन्यासी आये। उस भूतपूर्व सेठ की पत्नी ने उनके सामने अपनी व्यथा-कथा सुनाते हुए प्रार्थना की : ''बाबाजी ! मेरे मन में यह खटका हमेशा बना रहता है।''

दण्डी संन्यासी : ''माई ! तुम्हारे गाँव में एक संतपुरुष रहते हैं, एकनाथजी महाराज। उनका पुत्र हरिपंडित शास्त्री पढ़ा हुआ है किन्तु वह एकनाथजी महाराज की महिमा को नहीं जानता है। मैं उन्हें जानता हूँ। सारे धाम जिस परमात्मा में हैं उनका उन्होंने साक्षात्कार किया है। उन महाराज की प्रदक्षिणा करने पर तुम्हारे चार धाम तो क्या, सभी धामों की यात्रा पूरी हो जायेगी एवं उनको भोजन करवाने से चौरासी सौ तो क्या चौरासी लाख ब्राह्मणों को भोजन करवाने का पुण्य हो जायेगा। अगर वे एकनाथजी महाराज तुम्हारी प्रार्थना का स्वीकार कर लें तो तुम्हारे ये दोनों मनोरथ पूरे हो जायेंगे।''

माई तो बड़ी खुश हुई। दण्डी संन्यासी आगे बोले : ''किन्तु माई ! वे जल्दी नहीं स्वीकारेंगे क्योंकि उनका बेटा जरा जिद्दी है और उसने एकनाथजी महाराज से वचन ले रखे हैं।''

माई : ''कौन-से वचन ?''

दण्डी संन्यासी : ''बात यह है कि उनका बेटा जरा पढ़ा-लिखा है, विद्वान है। अतः एकनाथजी के विरोधियों ने उसे उकसाया ताकि बाप-बेटे के भीतर जरा वैमनस्य हो जाये। बाप के अंदर तो वैमनस्य नहीं था किन्तु बेटा समझता था कि 'पिताजी यह ठीक नहीं करते। हम ब्राह्मण लोग हैं फिर भी जिस-किसीके यहाँ खा लेना, यह तो धर्मभ्रष्ट होना है।' यह सोचकर हरिपंडित काशी भाग गया। उसके भाग जाने से गिरिजाबाई दुःखी रहने लगी, तब एकनाथजी को हुआ कि 'इतनी सती साध्वी पत्नी दुःखी है !' अतः बेटे को मनाने के लिए वे काशी गये और बेटे से कहा : 'चलो, वापस घर में।' तब बेटे ने पिता से वचन लिया : 'ब्राह्मण होकर किसीके भी हाथ का खा लेना उचित नहीं है। अतः आप किसीके भी हाथ का नहीं खायेंगे यह वचन दीजिए और दूसरी बात : आप संस्कृत में ही सत्संग करें। तभी मैं घर वापस आऊँगा।'

एकनाथजी महाराज वचन देकर उसे वापस घर ले आये हैं। अब उन्होंने लोकभाषा छोड़कर संस्कृत में सत्संग करना शुरू कर दिया है। जिन्हें श्रद्धा थी वे लोग तो टिके हैं, बाकी के सत्संगी कम हो गये हैं। किन्तु क्या करें ? बेटे का हठ जो है ! अब वे किसीके हाथ का भोजन भी नहीं करते क्योंकि वचन से जो बँधे हैं !''

अगर तीन मिनट के लिए भी ब्रह्मविद्या की अनुभूति हो जाये तो फिर इन्द्रपद भी तुच्छ लगने लगता है।

फिर भी माई ने हिम्मत न हारी। वह गयी एकनाथजी महाराज के पास और प्रार्थना करने लगी : ''दण्डी संन्यासी ने मुझे ऐसा-ऐसा कहा है। अब मेरे पास दूसरा उपाय भी नहीं है, अतः आप कृपा कीजिए।''

तब करुणा करके एकनाथजी ने कहा : ''अभी नही। जब मेरा बेटा उपस्थित हो तब आना और आग्रह करना किन्तु मैं मना करूँगा। तुम फिर आग्रह करना और मैं कहूँगा कि अगर मेरा हरिपंडित तुम्हारे घर आकर भोजन बनाये तो मैं भोजन करूँगा। तुम इस बात पर राजी हो जाना। वही तुम्हारे घर आकर भोजन बनायेगा तो सीधा तो तेरा ही होगा अतः तुझे शांति मिल जायेगी।''

माई : ''मेरी तो यह भावना थी महाराज ! कि मैं अपने हाथों से कुछ बनाकर आपको खिलाऊँ।''

एकनाथजी महाराज : ''जब भोजन बन जाये, पत्तलों में परोस दिया जाये और आधा भोजन हो जाये तब तुम अपने हाथ से बनाया हुआ एकाध मिष्टान्न पत्तल पर परोस देना। पूछना मत, नहीं तो वह 'ना' बोलेगा। तुम केवल परोस देना और फिर बोल देना कि 'राम ! राम ! भूल हो गयी...' फिर देखना, क्या होता है।''

लोभी को धन से वश किया जाता है, अहंकारी को प्रशंसा करके वश किया जाता है, मूर्ख को उसकी 'हाँ' में 'हाँ' मिलाकर वश किया जाता है जबकि संत और भगवान को सच्चाई और श्रद्धा से वश किया जाता है।

दयालु संत क्या करें ? युक्ति ही अजमानी पड़ती

है। एकनाथजी महाराज ने युक्ति बता दी और माई ने वैसा ही किया।

निश्चित दिवस पर दोनों गये उस माई के घर और हरिपंडित सब धो-धाकर भोजन बनाने लगा। भोजन बन जाने पर दो पत्तलें परोसी गयीं और भगवान को भोग लगाकर एकनाथजी महाराज एवं हरिपंडित ने भोजन का आरंभ किया।

'आज मैं धन्य हो गयी... धन्य हो गयी। हरिपंडितजी ! आपने बड़ी कृपा की....' यह कहते-कहते माई ने शीघ्रता से लड्डू रख दिये दोनों की पत्तलों पर।

एकनाथजी महाराज :

''यह क्या ? कच्चा भोजन ले आई ?''

माई : ''नहीं नहीं महाराज ! यह कच्चा नहीं है। इसमें मैंने पानी नहीं डाला। दूध में ही यह बनाया है। महाराज ! यह पक्का भोजन है।''

एकनाथजी महाराज : ''हरिपंडित ! यह तो पक्का भोजन है। खा लें ?''

हरिपंडित : ''अब तो खाना ही पड़ेगा पिताजी ! आप भी खा लें और मैं भी खा लेता हूँ।''

लोभी को धन से वश किया जाता है, अहंकारी को प्रशंसा करके वश किया जाता है, मूर्ख को उसकी 'हाँ' में 'हाँ' मिलाकर वश किया जाता है जबकि संत और भगवान को सच्चाई और श्रद्धा से वश किया जाता है। देखो, हम सब कुँजियाँ आपको बता रहे हैं। अपने को फँसाने की चाबी भी खुद ही आपको दे रहे हैं। सत्संग जो है !

भोजन हो गया। हरिपंडित को मन में जरा क्षोभ तो हुआ किन्तु क्या करे ? उठाई दोनों पत्तलें। तब एकनाथजी ने कहा :

''अरे, संकल्प तो कर कि जिसके घर का भोजन किया है उसकी मनोकामना तृप्त हो।''

अब संकल्प क्या करना ? हरिपंडित ने तो उठायी पत्तलें। एकनाथजी की पत्तल साफ थी, किन्तु हरिपंडित की पत्तल पर भोजन बचा था। अतः एकनाथजी की पत्तल पर अपनी पत्तल रखी तो देखता है कि एकनाथजी की पत्तल अपनी पत्तल के ऊपर आ गई। वह दंग रह गया : 'अरे ! मेरी पत्तल नीचे कैसे ! फिर से उसने एकनाथजी की पत्तल नीचे रखी किन्तु फिर वही पत्तल ऊपर ! ऐसा दो-चार बार हुआ।

कितनी दयालुता है ब्रह्म-परमात्मा को पाये हुए महापुरुषों की ! यदि सीधे-सीधे लोग नहीं समझ पाते तो युक्तियाँ-प्रयुक्तियाँ लड़ाकर भी वे समझा देते हैं और करुणा-कृपावश अपना पूरा जीवन लोकसेवा में बिता देते हैं।

कथा कहती है कि यह देखकर हरिपंडित का हृदय बदल गया। गिर पड़ा पिता के चरणों में। उसने पिता से माँगे हुए दो वचनों के बारेमें आग्रह छोड़ दिया। तब से एकनाथजी महाराज लोकभोग्य शैली में, आमजनता समझ सके ऐसी भाषा में सत्संग करने लगे।

कैसी है करुणा संतों की ! कितनी दयालुता है ब्रह्म-परमात्मा को पाये हुए महापुरुषों की ! यदि सीधे-सीधे लोग नहीं समझ पाते तो युक्तियाँ-प्रयुक्तियाँ लड़ाकर भी वे समझा देते हैं और करुणा-कृपावश अपना पूरा जीवन लोकसेवा में बिता देते हैं। 'लोकसेवा... लोकसेवा...' का ढोल तो खूब बजता है लेकिन सच्ची सेवा तो सत्पुरुषों के द्वारा ही होती है। नहीं तो उन्हें क्या जरूरत कि अपने एकान्त की, ब्रह्मानंद की मस्ती को छोड़कर लोगों के बीच आयें ? 'काश ! कोई लग जाये, कोई चल पड़े इस ब्रह्मविद्या के पथ पर और बना ले अपना काम...' यह सोचकर वे भी अहर्निश लगे रहते हैं लोककल्याण में। धन्य हैं ऐसे एकनाथजी महाराज जैसे महापुरुष और धन्य हैं उन्हें पहचानकर अपना आध्यात्मिक काम बना लेनेवाले साधक और भक्त !

(पृष्ठ १४ का शेष)

ब्रह्मज्ञान सुनो। बराबरी के मिल जायें तो उनके साथ ब्रह्मज्ञान की चर्चा करो और छोटे मिल जायें तो करुणा करके उपदेश के रूप में अपना ब्रह्मज्ञान पक्का करो।

तत् श्रवणं तत् कथनं अन्योन्य तत् बोधनं...

लोकवार्ता तो राग द्वेष पक्का करेगी, भगवान की वार्ता भगवदाकार वृत्ति को पक्का करेगी जबकि ब्रह्मविद्या तो भगवान जिससे भगवान हैं और जीव जिससे जीव है उस तत्त्व का साक्षात्कार कराकर भगवान का अभिन्न रूप से अनुभव करा देगी।

गोपियों की अनन्य प्रीति

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

जब तक नश्वर पदार्थों में आसक्ति होती है, नश्वर चीजों में प्रीति होती है और मिटनेवालों का आश्रय होता है तब तक अमिट तत्त्व का बोध नहीं होता और जब तक अमिट तत्त्व का बोध नहीं होता तब तक जन्म-मरण का चक्कर नहीं मिटता। यदि हृदय में परमात्मा के प्रति प्रेम हो जाए तो फिर आज तक हमने जो कुछ जाना, जो कुछ पाया, हमारे लिए उसकी कोई कीमत नहीं रहेगी और दूसरा कुछ जानने की या पाने की इच्छा भी नहीं रहेगी। हमें देखना यह है कि हमारी प्रीति सचमुच परमात्मा में है या परमात्मा का अवलंबन लेकर नश्वर चीजों की इच्छाएँ पूरी करने में है।

हमें देखना यह है कि हमारी प्रीति सचमुच परमात्मा में है या परमात्मा का अवलंबन लेकर नश्वर चीजों की इच्छाएँ पूरी करने में है।

ईश्वर में यदि सच्चे अर्थ में प्रीति हो जाती है तो फिर भक्त ईश्वर से नश्वर चीजों की माँग नहीं करता, वरन् भगवान में ही अपनी इच्छाओं को मिला देता है।

''हमारे तो प्राण, तन, मन, धन, सर्वस्व श्रीकृष्ण हैं। उनकी पीड़ा दूर करने के लिए हमें एक बार नहीं हजार बार नर्क में जाना पड़े तो भी हमें स्वीकार है।''

श्रीकृष्ण भगवान ने भी यह बात बहुत सुंदर तरीके से गीता में कही है :

मय्यासक्तमनाः पार्थ योगं युंजन्मदाश्रयः।
असंशयं समग्रं मां यथा ज्ञास्यसि तच्छृणु ॥

'हे पार्थ ! अनन्य प्रेम से मुझमें आसक्त चित्त तथा अनन्य भाव से मेरे परायण होकर योग में लगा हुआ तू जिस प्रकार से सम्पूर्ण विभूति, बल, ऐश्वर्यादि गुणों से युक्त, सबके आत्मरूप मुझको संशयरहित जानेगा, उनको सुन।' (गीता : ७.१)

ज्ञानं तेऽहं सविज्ञानमिदं वक्ष्याम्यशेषतः।
यज्ज्ञात्वा नेऽह भूयोऽन्यज्ज्ञातव्यमवशिष्यते ॥

'मैं तेरे लिये इस विज्ञानसहित तत्त्वज्ञान को सम्पूर्णतया कहूँगा, जिसको जानकर संसार में फिर और कुछ भी जानने योग्य शेष नहीं रह जाता।' (गीता : ७.२)

ईश्वरपरायण होने से, ईश्वर को अनन्य प्रेम करने से भक्त संसार की मोह-माया में से छूट जाता है और मुक्त हो जाता है।

एक बार भगवान श्रीकृष्ण ने अपनी पटरानियों का अभिमान दूर करने के लिए तथा उन्हें गोपियों की निंदा करने से रोकने के लिए एक लीला की।

श्रीकृष्ण चिल्लाने लगे : ''पेट में जोरों का दर्द है... सहा नहीं जाता... कुछ करो...''

बहुत सारे हकीम आये, उपचार हुआ लेकिन दर्द कम न हुआ। इतने में नारद मुनि वहाँ पहुँच गये। वे समझ गये कि यह भगवान की ही कोई लीला है। उन्होंने भगवान से विनम्र भाव से पूछा :

''अब आप ही बतायें कि कैसे आपका दर्द ठीक हो सकता है ?''

श्रीकृष्ण भगवान : ''एक ही इलाज है... मेरे अनन्य भक्त की चरणरज दवाई के साथ लेने से ही पेट की पीड़ा दूर हो सकती है।''

नारदजी गये भगवान की पटरानियों के पास और बोले : ''आप तो भगवान की सच्ची भक्त हैं। भगवान के पेट की पीड़ा दूर करने के लिए आपमें से कोई भी एक अपनी चरणरज मुझे दे दीजिए।''

पटरानियों ने तुरंत ही इन्कार करते हुए कहा : ''हमारी चरणरज भगवान खायें ? हमें क्या नर्क में जाना है ? नहीं नहीं, हम अपनी चरणरज हरगिज़ नहीं देंगे।''

नारदजी गये वृंदावन में गोपियों के पास। उन्होंने

गोपियों को भगवान के रोग की बात जैसे ही बतायी, वैसे ही 'कैसे हुआ... क्या हुआ... किस तरह मिटेगा...?' - ऐसे प्रश्नों की झड़ी नारदजी के ऊपर लग गई। नारदजी ने सब वृत्तान्त बताकर आखिर में कहा : ''दवाई तो आप सबके पास है लेकिन देगा कोई नहीं।''

गोपियाँ : ''ऐसा हो सकता है कि हमारे पास इलाज हो और हम न दें ? आप शीघ्र ही बतायें कि हम हमारे प्रेमास्पद के लिये क्या कर सकते हैं ?''

तप-व्रत आदि करके, अपनी योग्यता बढ़ाकर मुक्ति पाना यह भी मार्ग है लेकिन भगवान से मुहब्बत करते-करते अपने आपको भगवान के साथ तदाकार कर देना यह बड़ा रसीला मार्ग है।

नारदजी : ''नहीं, तुम नहीं दे सकोगी। यदि दोगी तो नर्क में जाना पड़ेगा।''

गोपियाँ : ''हमारे इष्ट का, हमारे प्रेमास्पद का दुःख यदि मिट सकता है तो हम नर्क में जाने के लिए भी तैयार हैं, सिर्फ आप इलाज बताइये।''

नारदजी : ''भगवान के भक्त की चरणरज यदि उन्हें दवाई के साथ मिलाकर पिलायी जाए तो उनके पेट का दर्द दूर हो सकता है।''

गोपियों ने पैर पसार दिये और बोलीं : ''ले लो।''

नारदजी : ''सोच लो, श्रीकृष्ण के लिये अपनी चरणधुलि दे रही हो, रौरव नर्क मिलेगा।''

गोपियाँ : ''हमारे तो प्राण, तन, मन, धन, सर्वस्व श्रीकृष्ण हैं। उनकी पीड़ा दूर करने के लिए हमें एक बार नहीं हजार बार नर्क में जाना पड़े तो भी हमें स्वीकार है।''

नारदजी ने तो खुश होते हुए चरणधूलि की पोटली बनायी और पहुँच गये भगवान के पास।

भगवान श्रीकृष्ण ने नारदजी से कहा : ''तुमने गोपियों को बताया नहीं कि ऐसा करने से उन्हें नर्क में जाना पड़ेगा ?''

नारदजी : ''मैंने तो बहुत समझाया था लेकिन वे कहती हैं कि एक क्षण के लिये भी यदि भगवान की पीड़ा दूर होती हो तो हम हजार बार नर्क में जाने के लिए राजी हैं।''

गोपियों की अनन्य प्रीति देखकर पटरानियों का मुँह लज्जा से नीचे हो गया। अनन्य भक्त के लिए तो भगवान भी अनुकूल हो जाते हैं। कहा जाता है :

भक्त मेरे मुकुटमणि, मैं भक्तन को दास।

इस प्रकार भगवान में आसक्त होकर मिथ्या जगत की नश्वर चीजों की आसक्ति छोड़ते जाओ। जितनी नश्वर पदार्थों की इच्छा मिटाते जाओगे, उतना ही उस प्यारे परमेश्वर के करीब आते जाओगे।

(पृष्ठ ४ का शेष)

में १३ दिन तक माला लेकर जप नहीं किया जा सकता।

जन्म एवं मरण दोनों ही अशौच में शुद्धि होने के पश्चात् ही माला से जप कर सकते हैं किन्तु मानसिक जप तो प्रत्येक अवस्था में किया जा सकता है।

रजस्वला स्त्री जब तक मासिक धर्म होता रहे तब तक माला से जप न करे एवं मानसिक जप भी प्रणव (ॐ) के बिना करे।

जब तक मासिक धर्म जारी हो, तब तक दीक्षा भी नहीं ली जा सकती है। अगर अज्ञानतावश पाँचवें-छठवें दिन भी मासिक धर्म जारी रहने पर दीक्षा ले ली गयी हो या इसी प्रकार की और कोई गल्ती हो गयी हो तो, उसके प्रायश्चित्त के लिये 'ऋषि पंचमी' (गुरुपंचमी) का व्रत कर लेना चाहिए।

स्त्रियों को मासिक धर्म में मंदिर में भगवद्दर्शन व आश्रम में संत दर्शन करने से पाप लगता है। पाँचवें दिन के बाद दर्शन करने चाहिये। यदि अनजाने में ऐसा अपराध हो जाय तो ऋषिपाँचम का व्रत करना चाहिए।

(पृष्ठ १७ का शेष)

परेशान हो रहे हैं कि जिस परमात्मा ने पूरा जीवन दिया उसके लिये ही समय नहीं दे सकते हैं।

लोग नश्वर चीजों में जितनी प्रीति रखते हैं, नश्वर चीजों को, नौकरी-धंधे को, नश्वर संसार के व्यवहार को जितना महत्त्व देते हैं उतनी प्रीति परमात्मा में रखें, उतना महत्त्व परमात्मा को दें तो उस यार की मुलाकात होने में देर न लगे, हर इन्सान भगवद्सत्ता को पा ले और सच्चा सत्ताधीश बन जाय।

तत्त्वदर्शन

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

हँसिबो खेलिबो धरिबो ध्यान अहर्निश कथिबो ब्रह्मज्ञान।
खावे पीवे न करे मन भंगा कहे नाथ मैं तिसके संगा ।।

जो खाये-पिये तो सही लेकिन मन को किसीमें फँसने न दे उसके साथ तो परमात्मा है ही। जो परिस्थितियों में, वस्तुओं में, व्यक्तियों में, दुःखों में, सुखों में मन को चिपकाता है उसके साथ दुःख देनेवाला संसार होता ही है । जो मन को कहीं चिपकने नहीं देता, उसका मन अपने मूल जगह पर होता है।

जो परिस्थितियों में, वस्तुओं में, व्यक्तियों में, दुःखों में, सुखों में मन को चिपकाता है उसके साथ दुःख देनेवाला संसार होता ही है । जो मन को कहीं चिपकने नहीं देता, उसका मन अपने मूल जगह पर होता है।

मन एक ऐसा सेतु है कि उसका एक छोर परमात्मा से उभरता है तो दूसरा छोर इन्द्रियों के द्वारा संसार में लगता है। जैसा यत्न हम संसार की चीजों को पाने में करते हैं वैसा ही परमात्मा को पाने में करें तो हम विफल होंगे। जिस प्रकार हम संसार की चीजों को देखना एवं उससे सुख लेना चाहते हैं, उसी प्रकार अगर परमात्मा को देखना एवं उससे सुख लेना चाहें तो हमें रोना ही पड़ेगा । तुलसीदासजी ने कहा है :

देखिये सुनिये गुनिये मन माहीं ।
मोह मूल परमारथ नाहीं ।।

जो देखने-सुनने में आता है, वह मोहमूल है लेकिन जिससे दिखता है, जिससे सुना जाता है वह सारे ब्रह्माण्ड का अधिष्ठान, मूल परमात्मा है।

पंजाबी में एक कहावत है : '**औ तकदे बाजीनूं... बाजीगर नूं कोई नी तकदा।**' अर्थात् ईश्वर के खेल को सब देखते हैं लेकिन जिसकी सत्ता से खेल दिख रहा है उस ईश्वर को कोई नहीं देखता। उसे देखना हो तो मन के मूल में जाना पड़ेगा और मन का मूल है परमात्मा।

मन का एक छोर परमात्मा है तो दूसरा छोर संसार, किन्तु आदत पड़ गयी है संसार को देखने की, संसार को पकड़ने की इसीलिए परमात्मा को प्राप्त नहीं कर पाते।

इतना कठिन भी है उसे पाना और सरल भी इतना ही है। योगवाशिष्ठ महारामायण में वशिष्ठजी महाराज कहते हैं : 'हे रामजी ! फूल-पत्ते एवं टहनियों को मसलने में परिश्रम है किन्तु अपने परमात्मा को पाने में क्या परिश्रम ? वह तो अपना ही आत्मा है।' फूल-पत्ते-टहनियाँ तो बाहर हैं। उनको मसलने के लिए हाथ चाहिए लेकिन यहाँ बाहर के फूल-पत्तों की तरफ जाना नहीं है। केवल जहाँ से वृत्ति की धारा उठती है उसे 'राधा' बना देना है।

'धारा' को उलटा दो तो क्या होगा ? 'राधा' । वृंदावन में तो सभी 'राधे-राधे' करते हैं। पहले राधा फिर कृष्ण। पहले आपकी धारा बाद में वह मूल। वृत्ति की जिस धारा पर सवार होकर आप संसार देखते हैं, उसी धारा को उलटा दो तो कृष्ण दिखेगा। 'धारा' को उलटा दोगे तो 'राधा' बनेगा और राधा तो श्रीकृष्ण की अर्धांगिनी है। गोरखनाथ ने बहुत बढ़िया बात कही है :

हँसिबो खेलिबो धरिबो ध्यान, अहर्निश कथिबो ब्रह्मज्ञान।

हँसते-खेलते अपनी धारा को राधा बनाया जाये। कई लोग ध्यान-भजन करते हैं, तब भी मानो झगड़ा करते हैं। पूछो : 'क्या कर रहे हो ?' जवाब होगा : 'ध्यान कर रहा हूँ।' तो ध्यान करनेवाला तो मौजूद रहा। ध्यान तो करो लेकिन जिसके लिए ध्यान किया जाता है, जिसकी सत्ता से ध्यान किया जाता है उस ईश्वर की प्रीति के लिए ध्यान करो, उस ईश्वर की प्रीति के लिए तप करो तो बहुत बढ़िया होगा। किन्तु ध्यान-भजन, जप-तप यज्ञादि करके कुछ बनना चाहा तो, जो बनेगा वह बिगड़ेगा भी जरूर।

जो बनता है वह बिगड़ता भी है। जैसे, जो पैदा होता है वह मरता भी है। जो मिलता है वह बिछुड़ता भी है। बनेगा तो बिगड़ेगा और जानेगा तो तरेगा- यह अकाट्य सिद्धांत है। तुलसीदासजी ने कहा है :

तन सुकाय पिंजर कियो धरे रैन दिन ध्यान।
तुलसी मिटे न वासना बिना विचारे ज्ञान ॥

इन्द्रियों एवं मन की बेवकूफी, वासना ज्ञान को विचारे बिना नहीं मिटेगी। ध्यान तो करो किन्तु ध्यान करके बुद्धि को इतना उन्नत करो कि जिससे विचार जागृत हो कि 'ध्यान कौन कर रहा है ? ध्यान किसका कर रहे हो ? जिसका ध्यान कर रहे हो वह कौन है ?' ध्याता, ध्यान और ध्येय... ध्यान करनेवाला, ध्यान करना और जिसका ध्यान किया जाता है वह ध्येय- इस त्रिपुटी के पहले एवं त्रिपुटी के बाद जो रहता है वह कौन है ? ऐसा खोजते-खोजते जो गहराई में जाता है उसके लिए नानकजी कहते हैं :

जिन खोजा तिन पाया गहरे पानी पैठ।
मैं भोरी डूबन डरी रही किनारे बैठ ॥

उस तत्त्व को, ईश्वर को पाना कठिन नहीं है लेकिन जिनको कठिन नहीं लगता - ऐसे सद्गुरुओं का मिलना कठिन है।

लोग कहते हैं कि हम संसार की चीजों को पकड़े बिना जी नहीं सकते किन्तु सच्चाई तो यही है कि संसार की चीजों को छोड़े बिना हम जी नहीं सकते। लोग बोलते हैं : "महाराज ! रूपये-पैसे, पत्नी-पुत्र-परिवार, नौकरी-धंधा, इनको थामे बिना हम जी नहीं सकते।" लेकिन सत्य यह है कि इनको छोड़े बिना आप जी नहीं सकते। प्रिय-से-प्रिय पत्नी हो, पति हो, रूपये-पैसे हों किन्तु रात्रि में जब सबको छोड़ते हो तभी चैन की नींद सो पाते हो और दूसरे दिन जीने के काबिल होते हो।

संसार को छोड़े बिना आप जी नहीं सकते और परमात्मा को पकडे बिना आप जी नहीं सकते। मजे की बात तो यह है कि परमात्मा को पकड़ने की मेहनत भी नहीं पड़ती। परमात्मा ने आपको ऐसा पकड़ा है कि अगर आप छूटना चाहें तब भी उससे नहीं छूट सकते। फिर भी आज तक उससे मुलाकात नहीं हुई इसलिए लगता है कि परमात्मा ने हमको नहीं पकड़ा। लहर को कब लगता है कि पानी ने मुझे पकड़ा है ? पानी को कब लगता है कि मैंने लहर को पकड़ा है ? अगर कम पकड़ा हो या दोनों के बीच दूरी हो तो लगे कि 'पकड़ा है।' किन्तु यहाँ तो दूरी नहीं है, वरन् परस्पर ओतप्रोत हैं। आप दुनिया को देख सकते हैं लेकिन ईश्वर को नहीं देख सकते क्योंकि ईश्वर आपसे कतई जुदा नहीं है।

जैसे, घटाकाश महाकाश से भिन्न नहीं हो सकता और महाकाश घटाकाश को अपने से भिन्न नहीं कर सकता, ऐसे ही जीवात्मा परमात्मा से अलग नहीं हो सकता और परमात्मा जीवात्मा से अलग नहीं हो सकता। अलग होने का आभास होता है, भ्रांति होती है अज्ञान के कारण। अज्ञान मिट जाये तो भ्रांति भी मिट जाती है, आभास भी मिट जाता है और परमात्मा का ज्ञान हो जाता है। गोरखनाथजी कहते हैं :

हँसिबो खेलिबो धरिबो ध्यान...

हँसते-खेलते ध्यान धरो। जो वृत्ति बहिर्मुख होती है, उसे पुनः अपने मूल में लाओ। अपने में लाओगे, एकाग्रता हो जायेगी तो संकल्पशक्ति बढ़ जायेगी। किन्तु उस संकल्पशक्ति से पुनः कहीं बाहर की झंझट में न पड़ जाओ, इसीलिए आगे गोरखनाथजी ने कहा :

अहर्निश कथिबो ब्रह्मज्ञान...

हँसते-खेलते ध्यान तो करो किन्तु केवल ध्यान ही पर्याप्त नहीं है, ब्रह्मज्ञान का कथन भी करो।

अपने से बड़े मिल जायें तो उनके चरणों में बैठकर

(शेष पृष्ठ १० पर)

घटाकाश महाकाश से भिन्न नहीं हो सकता, महाकाश घटाकाश को अपने से भिन्न नहीं कर सकता, ऐसे ही जीवात्मा परमात्मा से अलग नहीं हो सकता। अलग होने का आभास होता है अज्ञान के कारण। अज्ञान मिट जाये तो भ्रांति भी मिट जाती है और परमात्मा का ज्ञान हो जाता है।

ईश्वर को पाना कठिन नहीं है लेकिन जिनको कठिन नहीं लगता ऐसे सद्गुरुओं का मिलना कठिन है।

सच्चे सत्ताधीश से प्रीति

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

किसी नेता को देखकर लोग कहते हैं : 'यह तो नेता है... सत्ताधीश है...' लेकिन फकीर कहेंगे : 'यह तो लोगों की इच्छानुसार नाच नाचनेवाला कोई नर्तक है। वह नेता काहे का ? सत्ताधीश काहे का ? सच्चा सत्ताधीश तो परमात्मा है और उस सत्ताधीश के साथ अपना जो एकत्व है उसे जान लेना ही वास्तविक सत्ता को, सच्ची सत्ता को पाना है।'

बेटा अपने बाप से अलग होकर अपना मकान, अपनी दुकान अलग बना सकता है लेकिन उस जगन्नियंता से अलग होकर कोई अपनी सत्ता नहीं जमा सकता, अपना घर नहीं बना सकता, अपनी दुकान नहीं चला सकता क्योंकि वह जगन्नियंता सर्वत्र है। बाप की सत्ता तो घर, दुकान या खेत तक सीमित है लेकिन परमात्मा की सत्ता असीम है। तुम उस असीम से अलग होना चाहो तो भी अलग नहीं हो सकते। तो फिर अलग होने की मजदूरी क्यों करते हो ? उससे दूर नहीं हो सकते तो दूर होने का दुःसाहस क्यों करते हो ? सदियों से तुम उसे पीठ देते आये हो लेकिन अभी भी जरा संभलकर देखो तो वह सदा तुम्हारे पास मिलेगा। तुम उसका त्याग नहीं कर सकते। जगत की वस्तुओं को तुम सदा अपने पास रखना चाहो तो रख नहीं सकते और परमात्मा का त्याग करना चाहो तो तुम उसका त्याग नहीं कर सकते।

जहाँ अपनत्व होता है वहाँ अँगड़ाइयाँ भी होती हैं। मोहब्बत जब जोर पकड़ती है तब शरारत का रूप लेती है। गुरुजी ने परमात्मा के साथ हमारी मोहब्बत ऐसी पक्की कर दी है कि हम उसके साथ शरारत भी कर सकते हैं।

अगर परमात्मा तुम्हारा त्याग करना चाहे तो भी उसकी ताकत है क्या ? कोई कहेगा कि : 'बाबाजी ! क्या आप 'चेलेन्ज' कर रहे हैं उसको ?'

हाँ। जहाँ अपनत्व होता है वहाँ अँगड़ाइयाँ भी होती हैं। मोहब्बत जब जोर पकड़ती है तब शरारत का रूप लेती है। गुरुजी ने परमात्मा के साथ हमारी मोहब्बत ऐसी पक्की कर दी है कि हम उसके साथ शरारत भी कर सकते हैं। आपको भी मेरी यही सलाह है कि आपके भी ऐसे दिन जल्दी आयें कि आप भी उसके साथ शरारत की बात कर सको।

हम जब किसी अंनजान से मिलते हैं तब शुरू में तो 'आओजी ! बैठोजी !' कहते हैं, बड़े आदर से व्यवहार करते हैं। लेकिन दोस्ती जब जोर पकड़ती है, पुरानी हो जाती है, पक्की हो जाती है फिर चाहे कितना भी बड़ा सेठ हो या नेता हो, दोस्ती में सेठ सेठ नहीं रहता, सत्ताधीश सत्ताधीश नहीं रहता, विद्वान विद्वान नहीं रहता, मूर्ख मूर्ख नहीं रहता। प्रेम जब जोर पकड़ता है तब धन, पद-प्रतिष्ठा, विद्वत्ता से मुक्त हो जाता है।

कबीर के परमात्म-प्रेम ने ऐसा जोर पकड़ा था कि वे उनसे ही कहने लगे :

भला हुआ हरि बिसर्यो सिर से टली बला।
मुख से जपूँ न कर से जपूँ उर से जपूँ न राम।
राम सदा हमको जपे हम पावे विश्राम॥

वे राम के प्यार से इतने तृप्त हो गये कि अब वे राम को भूल जायें तो भी परवाह नहीं रही। अब तो राम उनको याद करते हैं, राम उनको प्यार करते हैं। ...और राम केवल कबीरजी को ही याद करते हैं ऐसी बात नहीं है। राम तुमको भी याद कर रहे हैं पर तुमको सुनाई नहीं पड़ता है। तुम्हें भी राम की याद आ जायें इसलिए उस राम ने तुमको सत्संग में भेज दिया है।

शाह लतिफ नाम के संत हो गयें सिंध में। उन्होंने कहा है :

''अगर तुझे परमात्मा सीधा मिल जाय तो अच्छी

बात है, आत्मज्ञान हो जाय तो अच्छी बात है नहीं तो जिनको आत्मज्ञान हुआ है ऐसे पुरुषों का संग कर। ऐसे महापुरुषों का संग न मिले तो जो आत्मज्ञानी महापुरुषों के शिष्य हों उनका तू शिष्य बन जा। उनका भी सान्निध्य न मिले तो उनके शिष्य का भी शिष्य बन जा। इससे भी तेरा बेड़ा पार हो जायेगा।''

राम तुमको याद कर रहे हैं पर तुमको सुनाई नहीं पड़ता है। तुम्हें भी राम की याद आ जाये इसलिए उस राम ने तुमको सत्संग में भेज दिया है।

जे भाईं जोगी थियाँ
त तमां छड् तमाम।

अगर तू जोगी होना चाहता है तो पदार्थों की सब आकांक्षाएँ छोड़ दे। वे तो दासी की नाईं तेरे पीछे आयेंगी।

जे भाईं जोगी थियाँ त तमां छड् तमाम।
सबुर जे शमशेर सां, कर कीने खे कतलाम॥

जीवन में धैर्य और सबूरी ला। 'नहीं हो सकता' इस बात को कत्लाम (कत्ल) कर दे।

गोला जे गोलनजा तिनजो थीउ गुलाम।
नांगा तुहिंजो नाऊँ लिखजे लाहूविन में॥

जो दासों का भी दास है उसका भी तू दास हो जा तो तेरा बेड़ा पार हो जाएगा।

परमात्मा तुम्हें याद कर रहे हैं और तुम नहीं सुन पाते हो। इसलिए संतों के द्वारा बुलवाया जा रहा है ताकि तुम भी उसकी महिमा सुन लो और उसमें मस्त होकर गाने लगो :

ऐसी भूल दुनियाँ के अन्दर साबूत करणी करता तू।
ऐसो खेल रच्यो मेरे दाता ज्यां देखूँ वाँ तू को तू॥
कीड़ी में नानो बन बेठो हाथी में तू मोटो क्यूं?
बन महावत ने माथे बेठो हांकणवाळो तू को तू॥
... ऐसो खेल०
दाता में दाता बण बेठो भिखारी के भेळो तू।
ले झोळी ने मागण लागो देवावाळो दाता तू॥
... ऐसो खेल०
चोरों में तू चोर बन बेठो बदमाशों के भेळो तू।
कर चोरी ने भागण लागो पकड़नेवाळो तू को तू॥
... ऐसो खेल०
नर नारी में एक बिराजे दुनियाँ में दो दिखे क्यूं?
बन बाळक ने रोवा लागो छानो राखणवाळो तू॥
... ऐसो खेल०
जल थल में तू ही विराजे जंत भूत के भेळो तू।
कहत कबीर सुनो भाई साधो! गुरु भी बन के बेठो तू॥
... ऐसो खेल०

मुझमें भी वही है, तुझमें भी वही है। जहाँ देखो वहाँ उस परमात्मा के सिवा कुछ भी नहीं है।

बुद्ध अपने भिक्षुओं को कहा करते थे : ''अगले जन्म में मैं किसी संत के पास गया था। मैंने प्रेमपूर्वक उन्हें प्रणाम किया और संत ने मुझे प्रणाम किया। मैं बड़ा शरमिंदा हुआ।''

संत को प्रणाम करने से हमारा अहंकार धुलता है, हमारे पाप कटते हैं, हमारी बुद्धि में विवेक जगता है।

जे को जन्म-मरण से डरे।
साधजनां की शरण पड़े॥
जे को अपना दुःख मिटवै।
साधजनां की सेवा पावै॥

भगवान के प्यारे संतों का दर्शन करना और उनको प्रणाम करना तो हमारे लिये उचित है। लेकिन संत अगर हमको प्रणाम करें तो हमें संकोच होता है।

बुद्ध ने कहा : ''मैंने जब उनसे पूछा कि, 'महाराज! हमें तो आपको प्रणाम करना चाहिए लेकिन आप हमको प्रणाम करते हो यह कुछ अजीब-सा लग रहा है, हमें शरमिंदा कर देता है।' तब उन संतप्रवर ने कहा : 'तुम ईश्वर के गीत सुनकर यहाँ आये हो। हमारे हृदय में परमात्मा का प्रागट्य हुआ है ऐसा मानकर, जानकर तुम हमें प्रणाम करते हो। तुम अपने हृदय में ईश्वर को प्रकट कराना चाहते हो इसलिए हमारे पास आते हो, हमें प्रणाम करते हो। तुम्हारे हृदय में जो परमात्मा प्रकट होनेवाला है उसे मैं अभी से प्रणाम करता हूँ। मैं देख रहा हूँ कि तुम्हारे हृदय में भी वह ईश्वर कभी-न-कभी प्रकट होगा ही। संतों का संग व्यर्थ नहीं जाता।''

आपके पास धन नहीं है और भीतर धन का आकर्षण है तो आप धनवानों का संग करोगे, धन पाने की आकांक्षा रखोगे। आपके पास सत्ता नहीं है, आप सत्ता पाना तो चाहते हो लेकिन मिली नहीं है तो जहाँ कहीं किसी सत्ताधारी

का भाषण होगा तो आप वहाँ पहुँच जाओगे क्योंकि भीतर में सत्ता का आकर्षण है। ऐसे ही जिनके पास रामनाम का धन नहीं है या कम है और मन में आकांक्षा है रामनाम के धन की तो ऐसे लोग पहुँच जाते हैं संतों के पास। अब जब आ ही गये हो तो मैं तुम्हें नश्वर आशीर्वाद क्यों दूँ ? मैं तो ऐसा देना चाहता हूँ कि जिसके मिलने से लेनेवाले को फिर कभी कुछ माँगना न पड़े और देनेवालों को तकलीफ न हो। फिर लेनेवाला-देनेवाला दो न रहे - एक होकर अमरता की यात्रा कर ले, सच्ची सत्ता को पा ले।

"तुम्हारे हृदय में जो परमात्मा प्रकट होनेवाला है उसे मैं अभी से प्रणाम करता हूँ। मैं देख रहा हूँ कि तुम्हारे हृदय में भी वह ईश्वर कभी-न-कभी प्रकट होगा ही। संतों का संग व्यर्थ नहीं जाता।"

आज के इस परम पावन दिवस पर आपको ऐसी सुहावनी बातें सुनने को मिल रही हैं : गुजराती में कहते हैं :

आजनो दिवस केवो छे ?
सोना करतां मोंघो छे ।

अर्थात्

आज का दिन कैसा है ?
सोने से भी महँगा है ।

सोना तो यहाँ पड़ा रह जाता है लेकिन आज का संकल्प, आज के दिन की हुई भगवान की चर्चा अगर मरते समय भी याद आ गई तो कल्याण निश्चित है। अगर मरते समय याद न भी आई तो दूसरे जन्म में यह जो संस्कार पड़े हैं वे काम आएँगे। ब्रह्मविद्या का यह अमृत जो मिला है वह मरने के बाद भी आपका सहारा बनेगा। इसलिए आज का दिन सोने से भी महँगा है। जिस दिन सत्संग मिल जाये, जिस दिन परमात्म-तत्त्व का ज्ञान सुनने को मिल जाये, उसमें आराम पाना मिल जाये उस दिन मानो आपको खजाना हाथ लग गया है। यह मत समझना कि कपड़े-लत्ते, गहने, मकान-दुकान नहीं है तो आप दरिद्र है। ऐसा कभी मत सोचना। दरिद्र तो वह है जिसके पास भीतर की शांति नहीं है। किसी के पास धन तो बहुत हो सकता है, लेकिन यदि शांति नहीं है तो क्या फायदा ?

जिस दिन सत्संग मिल जाये, परमात्म-तत्त्व का ज्ञान सुनने को मिल जाये, उसमें आराम पाना मिल जाये उस दिन मानो आपको खजाना हाथ लग गया है।

लोग कहेंगे : 'यह तो सेठ है।' पर सेठ काहे का ? धन कमाने में तो मजदूरी की ही है और धन ज्यादा इकट्ठा किया है तो फिर उसे संभालने की झंझट में भी पड़ा है तो धन का वह चौकीदार ही हुआ कि और कुछ ? उसके पास सुख के कितने ही साधन हों पर भीतर परमात्मा की शांति नहीं है तो सुख के साधन भी बोझ बन जाएँगे। अतः भीतर की सुख-शांति जिसके पास नहीं है वही दरिद्र है। बाहर की दरिद्रता तो कहनेभर की है।

जिसे वह इश्क देना चाहता है उसीको आजमाता है।
खजाने रहमत के इसी बहाने लुटाता है॥

जिसे वह परमात्मा अपनी प्रीति देना चाहता है उसे वह कठिन परिस्थितियों से गुजारता है। उसे आसक्ति नहीं देता, ममता नहीं देता, लोभ-लालच नहीं देता। जिसे वह अपनी मोहब्बत के काबिल नहीं समझता, उसको वासना-कामना आसक्ति देता है, अहंकार देता है। ऐसा आदमी संत के पास भी नहीं जा सकता, सत्संग में भी नहीं बैठ सकता। वह अपने भीतर के घर भी नहीं आ सकता। वह तो इधर-उधर की बातें करता हुआ, जहाँ-तहाँ घूमता-फिरता हुआ चूहों की नाईं अपना जीवन बरबाद कर देता है। वह उस परमात्मा की प्रीति नहीं पा सकता।

मनुष्य जितना समय तुच्छ चीजों में, बेटे-बेटी, चाचा-मामा, सास-ससुर के पीछे बरबाद करता है, दोस्ती में और मेहफिलों में गँवाता है उससे आधा समय भी सत्कर्म में, सेवा में लगा दे तो उससे अंतःकरण शुद्ध हो जाय और आत्मा का ज्ञान हो जाय। संसार को ईश्वर से ज्यादा सच्चा मान बैठे हैं। भगवान को, भगवत्तत्त्व के ज्ञान को, भगवान की भक्ति को जितना महत्त्व देना चाहिए उससे ज्यादा संसार को, संसार के संबंधों को महत्त्व दे रहे हैं। वे इसलिए

(शेष पृष्ठ १२ पर)

समर्थजी का सामर्थ्य

- *पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू*

समर्थ रामदास एकांत में निजानंद की मस्ती में रहते थे एवं लोगों में भी उस निजानंद की मस्ती का प्रसाद बाँटते थे।

उस जमाने में वामन पंडित का बड़ा बोलबाला था। वह जितना विद्वान था उतना ही घमंडी भी था। उसको अपनी विद्वत्ता का इतना घमंड था कि भर दोपहर में भी घी की दो मशालें जलाकर रखता था। कई पंडितों को हराकर उसने दिग्विजय प्राप्त कर ली थी। किसीने एक बार उससे कह दिया : ''जब तक तुम समर्थ रामदास को नहीं हराओगे, तब तक तुम्हारी दिग्विजय पूरी नहीं मानी जायेगी।''

> *''गुरुदेव ! आपके लिए तो लाभ-हानि, निंदा-स्तुति सब समान है किन्तु आपके शिष्यों की इज्जत का सवाल है। लोग अगर कहेंगे कि 'तुम्हारे गुरु हार गये' तो आपको तो कोई परवाह नहीं है किन्तु हमको यह सुनकर दुःख होगा।''*

वामन पंडित को बात चुभ गयी। वह निकल पड़ा समर्थ को हराने के हेतु से। इधर समर्थजी को पता चल गया कि वामन पंडित शास्त्रार्थ करने के लिए आ रहा है। समर्थजी शास्त्रार्थ के पचड़े में नहीं पड़ना चाहते थे, अतः उन्होंने दो भूत भेज दिये।

मार्ग में जिस पेड़ के नीचे वामन पंडित आराम कर रहा था उसी पेड़ पर वे दो भूत आपस में लड़ने लगे। इतने में तीसरा भूत आया और बोला : ''तुम लोग क्यों लड़ रहे हो ? अभी तो वामन पंडित जा रहा है समर्थ से शास्त्रार्थ करने। बड़ा घमंडी है यह वामन पंडित। शास्त्रों का ज्ञान रट-रटाकर अपने को बड़ा पंडित मानता है। इसके पास है ही क्या ? समर्थ के पास तो असली अनुभव है जबकि इसके पास तो रटा-रटाया ज्ञान है फिर भी घमंड दुनियाभर का है। जो पाखंड करता है वह मरकर प्रेत होता है। यह भी मरकर प्रेत ही बनेगा तो तुम लोग क्यों लड़कर मर रहे हो ?''

वामन पंडित सुनकर चौंका, किन्तु फिर अपनी विद्या के घमंड में सुना-अनसुना करके तय कर लिया : 'मैं तो शास्त्रार्थ करने जाऊँगा।' वामन पंडित गया समर्थजी के पास और बोला : ''महाराज ! मैं दिग्विजयी होना चाहता हूँ। और सबको तो हरा चुका, केवल आप ही बचे हैं। अतः अब आप मेरे साथ शास्त्रार्थ करें।''

अब वामन पंडित तो दिनभर शास्त्र पढ़नेवाला और समर्थजी दिनभर निजानंद की मस्ती में रहनेवाले। शास्त्रार्थ कैसे हो ? शास्त्रार्थ की रुचि भी तो होनी चाहिए। अतः समर्थजी ने हाथ जोड़ दिये और बोले : ''मैं अपनी हार स्वीकार करता हूँ।''

कोई श्रद्धा-भक्ति से समर्थजी के पास आता तो अलग बात थी। किन्तु मूढ़ों से, अभिमानी से ज्ञानी क्या शास्त्रार्थ करेंगे ? क्यों व्यर्थ में शास्त्रार्थ के पचड़े में पड़ेंगे ? अपनी प्रभुमस्ती को छोड़कर क्यों व्यर्थ वाद-विवाद करेंगे ? अतः समर्थजी ने शास्त्रार्थ से पहले ही हार स्वीकार कर ली।

ज्ञानी के हम गुरु हैं मूरख के हैं दास।
उसने उठाया डंडा तो हमने जोड़े हाथ ॥

समर्थजी का कथन सुनकर वामन पंडित ने समर्थजी से कहा : ''आप यह लिखकर दे देवें कि मैं वामन पंडित से हार गया।''

समर्थजी : ''तू ही लिख ले जो तुझे लिखना हो।''

पंडित ने जो कुछ लिखना था लिख दिया और हस्ताक्षर करने के लिए कागज बढ़ा दिया समर्थजी की ओर। समर्थजी का शिष्य कल्याण पास में ही बैठा था। वह बोल उठा : ''गुरुदेव ! आपके लिए तो लाभ-हानि, निंदा-स्तुति सब समान है किन्तु आपके शिष्यों की इज्जत का सवाल

है। लोग अगर कहेंगे कि 'तुम्हारे गुरु हार गये' तो आपको तो कोई परवाह नहीं है किन्तु हमको यह सुनकर दुःख होगा। अतः कृपा करके मेरी प्रार्थना का स्वीकार कर लें।''

तब समर्थजी ने पंडित से कहा : ''कल्याण क्या चाहता है ? तुम क्या चाहते हो ? आपस में तय कर लो।''

इतने में एक शूद्र वहाँ से गुजर रहा था। कल्याण ने उससे पूछा : ''तुम कौन हो ?''

वह बोला : ''शूद्र।''

कल्याण ने एक लकीर खींच दी और शूद्र से कहा :

''लाँघ इसको।''

शूद्र ने रेखा लाँघ दी। तब कल्याण ने पूछा : ''अब तुम कौन हो ?''

वह बोला : ''महाराज ! मैं वैश्य हूँ।''

कल्याण ने दूसरी लकीर खींचकर पार करवायी और पूछा : ''अब बताओ, तुम कौन हो ?''

वह : ''मैं क्षत्रिय हूँ।''

कल्याण ने पुनः तीसरी लकीर खींची और उसे पार करवाकर पूछा :

''सच बताओ, तुम कौन हो ?''

वह : ''मैं ब्राह्मण हूँ।''

पुनः एक लकीर खींचकर उसे पार करवाकर कल्याण ने पूछा :

''अब ?''

वह बोला : ''जिसको पाने के लिए ब्राह्मण का जन्म होता है, मैं वह चैतन्य ब्रह्म हूँ।''

पंडित हैरान हो गया कि मेरे देखते-देखते जो अनपढ़-गँवार शूद्र था वह इतना अधिकारपूर्वक शास्त्रार्थ के लिए ललकार सकता है ! समर्थ के शिष्य कल्याण ने ही उसे ऐसा बना दिया तो स्वयं गुरु कितने महान होंगे !

फिर उस भूतपूर्व शूद्र ने वामन पंडित को ललकारा :

''आ जा मेरे साथ शास्त्रार्थ करने।''

पंडित हैरान हो गया कि 'मेरे देखते-देखते जो अनपढ़ गँवार शूद्र था वह इतना अधिकारपूर्वक शास्त्रार्थ के लिए ललकार सकता है ! समर्थ के शिष्य कल्याण ने ही उसे ऐसा बना दिया ! जिनके शिष्य में इतना योगबल और सामर्थ्य है तो स्वयं गुरु कितने महान् होंगे ? ऐसे गुरु को मैं हराने आया ? गिर पड़ा वामन पंडित समर्थजी के चरणों में और क्षमा माँगने लगा।

संत तो उदारहृदय होते ही हैं। समर्थजी ने उसे क्षमा कर दिया। फिर आजीवन वह समर्थजी के चरणों में शिष्य बना रहा। यह भी उसका सौभाग्य है !

धन्य धन्य यह अनुपम त्याग...

जब देश मुसलमानों के शासन से आक्रान्त था, मनुष्य धर्म-कर्म से च्युत होकर धर्मों के पाखण्ड का आश्रय लिए हुए था, सर्वत्र वाममार्ग एवं घोर तांत्रिक पद्धतियों का बोलबाला बढ़ गया था ऐसे समय में भारत की धरा को हरिरस से प्लावित करने के लिए पुण्यतोया गंगा के तट पर स्थिर नवद्वीप (बंगाल) नामक स्थल पर जिस अवतार का प्रागट्य हुआ, वही है प्रेमावतार श्री गौरांग।

''इस पुस्तक ने आपको इतना कष्ट पहुँचाया तो इसे मैं अभी नष्ट कर देता हूँ।'' गौरांग ने पूरा ग्रंथ गंगा में बहा दिया। गंगा के तीव्र प्रवाह में वे पन्ने इधर-उधर थिरकने लगे।

उस समय नवद्वीप न्यायशास्त्र का गढ़ था। श्री गौरांग मेधावी तो थे ही। १६ वर्ष की अल्प आयु में ही उन्होंने न्याय के ऊपर टीका लिखना भी आरंभ कर दिया। उन दिनों प्रसिद्ध नैयायिक पं. रघुनाथजी भी न्याय की एक टीका 'दीधिति' लिख रहे थे।

श्री गौरांग भी टीका लिख रहे हैं यह जानकर पं. रघुनाथजी ने एक दिन उनसे कहा :

''भाई ! हमने सुना है कि न्याय के ऊपर तुम कोई ग्रंथ लिख रहे हो ? हमारी बड़ी इच्छा है कि किसी दिन अपना ग्रंथ हमें भी दिखाओ।''

श्री गौरांग : ''अजी ! आप भी कैसी बातें कर रहे है ? न्याय जैसे जटिल विषय पर भला हम लिख भी क्या सकते हैं ? वह तो केवल एक विनोद मात्र है।''

पं. रघुनाथजी : ''कुछ भी हो, मेरी प्रबल इच्छा है तुम्हारा ग्रंथ देखने की। यदि तुम्हें कोई आपत्ति न हो तो

अपना ग्रंथ मुझे जरूर दिखाओ।''

श्री गौरांग : ''भला, इसमें आपत्ति की बात ही क्या हो सकती है ? यह तो हमारा सौभाग्य है कि आप जैसे विद्वान हमारी कृति को देखने की जिज्ञासा करते हैं। मैं कल जरूर उसे ले आऊँगा।''

दूसरे दिन गौरांग ग्रंथ लेकर गये एवं पाठशाला से लौटते समय नाव पर बैठकर रघुनाथजी को अपना ग्रंथ सुनाने लगे। ज्यों-ज्यों रघुनाथजी ग्रंथ सुनते थे त्यों-ही-त्यों उनकी व्याकुलता बढ़ने लगी और अंत में तो वे फूट-फूटकर रो पड़े। रघुनाथजी को रोते देखकर आश्चर्यचकित हो गौरांग ने पूछा : ''अरे ! आप रो क्यों रहे हैं ?''

जितने भी महापुरुष इस धराधाम पर हो गये हैं उनकी महानता का द्योतक उनका त्यागमय जीवन ही रहा है, फिर चाहे गौरांग हों चाहे श्रीरामकृष्ण परमहंस हों चाहे कोई और हों।

पं. रघुनाथजी : ''गौरांग ! सच बात तो यह है कि मैं इस अभिलाषा से एक ग्रंथ लिख रहा था कि वह न्याय का सर्वश्रेष्ठ ग्रंथ होगा। किन्तु तुम्हारे इस ग्रंथ को देखकर मेरी सारी अभिलाषाओं पर पानी फिर गया। कल तुम्हारे इस ग्रंथ के समक्ष मेरे ग्रंथ को कौन पूछेगा ? इसी मनोवेदना के कारण मैं रो पड़ा।''

यह सुनकर गौरांग बड़ी सहजता से बोले : ''अरे ! केवल इतनी छोटी-सी बात के लिए आप इतने दुःखी हो रहे हैं ? यह तो साधारण-सी पोथी है। मैं तो आपकी प्रसन्नता के निमित्त जलती आग में कूदकर इन प्राणों को भी स्वाहा कर सकता हूँ तो फिर इसकी तो बात ही क्या ? इस पुस्तक ने आपको इतना कष्ट पहुँचाया तो इसे मैं अभी नष्ट कर देता हूँ।''

यह कहकर गौरांग ने पूरा ग्रंथ गंगा में बहा दिया। गंगा के तीव्र प्रवाह में वे पन्ने इधर-उधर थिरकने लगे। गौरांग के इस अनुपम त्याग को देखकर गद्गद् कंठ से पं. रघुनाथजी कह उठे :

''भैया गौरांग ! ऐसा लोकोत्तर दुस्साध्य कार्य केवल तुम्हीं कर सकते हो। इतनी भारी लोकेषणा को तृणवत् समझकर उसका तिरस्कार कर देना तुम्हारे सरीखे महापुरुषों का ही काम है। हम तो कीर्ति और प्रतिष्ठा के कीड़े हैं। संसार में हमारी पुस्तक की अपेक्षा लाखों गुना ख्याति तुम्हारे इस त्याग की होगी और आगे के लोग इस त्याग के द्वारा प्रेम का महत्त्व समझ सकेंगे।''

अहो ! मित्र का यह अनुराग।
धन्य-धन्य यह अनुपम त्याग ॥

भले ही टीका पं. रघुनाथजी की 'दीधिति' प्रसिद्ध हुई किन्तु करोड़ों दिलों में स्थान तो श्री गौरांग ने ही लिया।

जितने भी महापुरुष इस धराधाम पर हो गये हैं उनकी महानता का द्योतक उनका त्यागमय जीवन ही रहा है, फिर चाहे गौरांग हों चाहे श्रीरामकृष्ण परमहंस हों चाहे कोई और हों। दूसरों के दुःख को मिटाने के लिए उन्होंने अपना सर्वस्व तक समर्पित कर दिया, अपने प्राणों तक की बाजी लगा दी। अपनी व्यक्तिगत सुख-सुविधा, प्रतिष्ठा आदि की परवाह किये बिना वे तो बस लुटाते हैं, लुटा रहे हैं और लुटाते रहेंगे... धन्य उनकी करुणा ! धन्य उनकी आत्म-विश्रांति ! काश, हम उनके जीवन से कुछ प्रेरणा पा सकें...

(पृष्ठ ७ का शेष)

तक पहुँच जायेगा और देर-सबेर परमात्म-साक्षात्कार कर जन्म-मरण से मुक्त हो जायेगा।

सद्गुरु की सेवा किये, सबकी सेवा होय।
सद्गुरु की पूजा किये, सबकी पूजा होय ॥

सातवाँ उपाय : एकान्त में प्रार्थना और ब्रह्माभ्यास करें। यदि इन सात बातों को जीवन में उतार लें तो अवश्य ही परमात्मा का अनुभव होगा।

यदि आप चाहो कि सब आपको प्यार करें तो आप दूसरों के काम आओ, दूसरे तुम्हें स्नेह करेंगे और भगवान के, गुरु के दैवी कार्य में भागीदार होंगे तो वह भजन हो जायेगा। कुछ पाने की आशा नहीं रखोगे तो मुक्ति मिल जायेगी। रुचिपूर्ति के चक्कर में न पड़कर रुचि की निवृत्ति करना चाहिये। इच्छाओं की पूर्ति में तो बँधन है, इसके लिए अनेक लोगों की गुलामी भी करनी पड़ती है। लेकिन इच्छाओं की निवृत्ति कर, ईश्वर में विश्रांति पाकर जन्म-मरण के बँधन से मुक्त होने में आप स्वतंत्र हैं। अनुकूलता की लालच न रखें और प्रतिकूलताओं से भय न रखें तो दोनों आपके दास हो जायेंगे और आप सच्चे सुख के स्वामी बन जायेंगे।

उदारात्मा जयदेवजी महाराज

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

श्री मद्भगवद्गीता में आता है :

दुःखेष्वनुद्विग्नमनाः सुखेषु विगतस्पृहः ।
वीतरागभयक्रोधः स्थितधीर्मुनिरुच्यते ॥

'दुःखों की प्राप्ति में जिसका मन उद्वेगरहित है और सुखों की प्राप्ति में जिसकी स्पृहा दूर हो गयी है तथा जिसके राग, भय और क्रोध नष्ट हो गये हैं, ऐसा मुनि स्थिरबुद्धि कहा जाता है।' (गीता : २.५६)

सुख में आसक्ति नहीं, वाहवाही में आसक्ति नहीं और दुःख में उद्वेग नहीं हो तो हृदय रहेगा शांत। अगर शांत रहने का विचार पक्का रखो तो फिर आपको यदि कोई सतायेगा तो कुदरत उसको ठीक कर देगी।

'गीतगोविंद' के कर्त्ता थे जयदेवजी। उनके पिता जब चल बसे तब ब्याजखोर आदमी ने जयदेवजी से कहा : ''तेरे पिता ने हमसे बहुत सारा कर्जा लिया है।''

जयदेवजी : ''पिता संपत्ति तो ज्यादा छोड़ नहीं गये हैं। एक छोटा-सा घर है जिसमें रहकर भगवान का भजन करता हूँ। आमदनी तो है नहीं, कमाऊँगा तब दे दूँगा।''

पिता ने तो लिये थे कुछ गिने-गिनाये रूपये किन्तु ब्याजखोर ने बदमाशी करके, ब्याज चढ़ाकर उसका पूरा मकान ले लेने के कागजात बनवा लिये। फिर जयदेवजी से कहा : ''अगर तुम अपने पिता का कर्जा नहीं चुका सकते तो अपना मकान हमारे हवाले कर दो और इन कागज़ों पर हस्ताक्षर कर दो।''

जयदेवजी ने हस्ताक्षर कर दिये। ब्याजखोर ने मकान पर कब्जा कर लिया और जयदेवजी से कहा :

''अब तुम बाहर निकलो। यह मकान मेरा हो गया।''

जयदेवजी : ''ठीक है भाई ! मैं निकल जाता हूँ। जैसी भगवान की मर्जी।''

जयदेवजी तो हरिनाम का जप करते-करते घर छोड़कर बाहर निकल गये। जयदेवजी जा रहे थे, उस समय वह ब्याजखोर भी साथ में था। इतने में उसके नौकर दौड़ते-दौड़ते आये और बोले : ''घर में आग लग गयी है।'' यह सुनकर ब्याजखोर घबरा गया।

तब जयदेवजी बोले : ''चिन्ता मत करो।''

जयदेवजी भगवान का नाम लेते हुए उस घर में घुसे तो आग शांत हो गयी। जयदेवजी पुनः बाहर निकले तो आग पुनः लग गयी।

यह देखकर उस ब्याजखोर का मन बदल गया कि : 'अरे ! मैंने जयदेव को सताया है। इसके पिता ने तो गिने-गिनाये रूपये लिये थे लेकिन मैंने जुल्म करके इसका पूरा मकान हथिया लिया फिर भी यह शांत रहा। किन्तु विधाता से नहीं सहा गया इसीलिए घर में आग लगी है...।' ब्याजखोर ने जयदेवजी के पैर पकड़े और प्रार्थना करके मकान वापस देते हुए कहा : ''अब आप भजन-चिंतन करें। आपके जीवन का निर्वाह भी मैं करूँगा।''

जयदेवजी ने कहा : ''तुम्हारे सहारे मेरा जन्म नहीं हुआ है। जिसने मुझे जन्म दिया है, वही मेरा निर्वाह करेगा।''

कुछ समय के बाद जयदेवजी जगन्नाथपुरी के लिए रवाना हुए। मार्ग में भूख लगने पर सत्तू भिगोकर खा लेते। मार्ग में एक ऐसा स्थल भी आया कि न पीने को पानी मिले न खाने को भोजन। नंगे पैर... ऊपर धूप... पास में एक भी पैसा नहीं... ऐसी स्थिति में चलते-चलते जयदेवजी गिर

> *सुख में आसक्ति नहीं, वाहवाही में आसक्ति नहीं और दुःख में उद्वेग नहीं हो तो हृदय रहेगा शांत। अगर शांत रहने का विचार पक्का रखो तो फिर आपको यदि कोई सतायेगा तो कुदरत उसको ठीक कर देगी।*

कर बेहोश हो गये।

इतने में एक ग्वाला आया। उसने मुँह पर पानी छींटा तो बेहोशी दूर हो गयी। फिर उसने खाने को फल दिये, अमृत जैसा पानी पिलाया और बोला :

''आपको जगन्नाथपुरी जाना है न ? मुझे भी वहीं जाना है। चलो, मैं आपको छोड़ देता हूँ।''

ग्वाला के वेश में भगवान उसे जगन्नाथपुरी तक छोड़ने आये। जयदेवजी को हुआ कि : 'यह अनजान ग्वाला... रोज मुझे खाने का ला देता था, इसके साथ यात्रा बड़ी सुखद रही। जीव का तो ऐसा स्वभाव नहीं होता कि किसी अपरिचित के ऊपर इतनी दया करे। ये या तो महात्मा हैं या परमात्मा हैं।' आखिर उनसे न रहा गया और पूछ बैठे :

''हे ग्वाला ! सच-सच बताओ कि तुम कौन हो ?''

ग्वाला : ''मुझे जो जैसा मान ले, मैं वही हूँ।''

जयदेवजी को समझते देर न लगी कि : 'हो न हो, यही मेरे प्रभु हैं।' ज्यों-ही जयदेवजी पैर पकड़ने को गये तो भगवान छटक गये और बोले : ''अभी कइयों को तीर्थ में पहुँचाना है, जयदेव !''

ऐसा कहकर प्रभु अन्तर्धान हो गये। फिर जयदेव कई वर्षों तक जगन्नाथपुरी में रहे। भिक्षा माँगकर खा लेते और भगवान का भजन करते।

जगन्नाथपुरी में ही सुशील नाम का एक ब्राह्मण रहता था। उसको एक कन्या थी। वह १५ साल की हो चुकी थी। एक रात्रि को उस ब्राह्मण दम्पती को स्वप्न आया जिसमें भगवान जगन्नाथ ने दर्शन देते हुए कहा : ''पेड़ के नीचे जो जयदेव बैठा है न, उसे अपनी कन्या का दान कर दो।''

दूसरे दिन सुबह ब्राह्मण दम्पती पहुँचे अपनी कन्या को लेकर जयदेवजी के पास और कन्यादान स्वीकार करने का आग्रह करने लगे। तब जयदेवजी बोले :

''मैं अपना घर भी छोड़कर आया हूँ, कमाता भी नहीं हूँ। मैं एक गरीब ब्राह्मण... मेरे पास कुछ भी नहीं है तो भला तुम्हारी कन्या का निर्वाह कैसे कर सकूँगा ?''

ब्राह्मण : ''हे विप्र ! चाहे आपके पास कुछ भी न हो, भले एक पेड़ के नीचे बैठे हो लेकिन हमें तो भगवान ने स्वप्न में आज्ञा दी है इसलिए यह कन्या हम आपको ही अर्पण करेंगे।''

जयदेवजी के बहुत मना करने पर भी सुशील ब्राह्मण ने कन्यादान कर दिया। वह कन्या भी बड़ी सुशीला थी। उसने अपने पति की भगवद्भक्ति में कोई कमी न आने दी। बड़े प्रेम से भोजन बनाकर भगवान को भोग लगाती, पति को खिलाती, फिर स्वयं खाती। पति की सेवा करते-करते उसमें भी पातिव्रत्य का अनुपम बल आ गया।

घूमते-घामते जयदेवजी पुनः अपने गाँव वापस आये। कुछ समय के अंतराल से उन्हें पुनः जगन्नाथपुरी जाने का मन हुआ। तब तक 'गीतगोविंद' की रचना हो चुकी थी एवं उन्होंने काफी प्रसिद्धि पा ली थी। जब वे एक गाँव में पहुँचे तब गाँववालों ने उन्हें पहचान लिया। सत्संग के बाद जब वे विदा होने लगे तो गाँववालों ने उन्हें स्वर्ण-मुद्राएँ भेंट दीं।

जयदेवजी धन कमर में बाँधकर वहाँ से रवाना हुए। जंगल का रास्ता था। जिस गाँव से जयदेवजी सत्संग करके आ रहे थे, उस गाँव के चार आदमियों की नजर जयदेवजी पर थी। बुरी नीयत थी उनकी। जरूरी नहीं कि सत्संग में सभी सज्जन ही आयें। उन चार आदमियों ने, जो वास्तव में डाकू ही थे, जयदेवजी का पीछा किया और जयदेवजी की रकम छीनकर, उनके हाथ-पैर की ऊँगलियाँ तोड़कर उन्हें कुएँ में धकेल दिया ताकि जयदेवजी कहीं जा न सकें। डाकुओं को भय था कि यदि लोगों को पता चलेगा तो वे राजा से कहकर उन्हें पकड़वा देंगे और हमें मृत्युदण्ड मिल जायेगा।''

जयदेवजी फिर भी इतने शांत और मस्त थे कि कुएँ में पड़े-पड़े ही गाने लगे : ''वाह प्रभु ! तेरी लीला अपरंपार है ! प्रभु ! तेरी माया अपरंपार है ! सुख आया और गया,

जयदेवजी भगवान का नाम लेते हुए उस घर में घुसे तो आग शांत हो गयी। जयदेवजी पुनः बाहर निकले तो आग पुनः लग गयी।

डाकू ने जयदेवजी का पीछा किया और जयदेवजी का धन छीनकर, उनके हाथ-पैर की ऊँगलियाँ तोड़कर उन्हें कुएँ में धकेल दिया।

दुःख आया है वह भी जायेगा, लेकिन तू तो सदा हमारे साथ है।'' दुःख के प्रसंग में भी उन्होंने अपना सुखद भगवद्भाव बना लिया।

इतने में गौड़ेश्वर के राजा लक्ष्मणसेन वहाँ से गुजरे। उन्हें लगा कि 'कुएँ में से मधुर आवाज आ रही है और यह आवाज जयदेवजी की लगती है।' अंदर झाँककर देखा तो जयदेवजी ही कुएँ में बँधे हुए पड़े हैं। राजा ने अपने सैनिकों को उतारा कुएँ में और जयदेवजी को निकलवाया। बाहर आने पर राजा ने पूछा :

''जयदेवजी ! आपकी यह हालत किसने की ?''

जयदेवजी : ''महाराज ! यह मत पूछो।''

राजा : ''नहीं नहीं... बता तो दो, हम उनको ठीक कर देंगे। हम चारों ओर सिपाही भेजकर उन्हें पकड़वायेंगे। आपको दुःख देनेवालों की खबर ले लेंगे।''

जयदेवजी : ''खबर लेनी ही है तो अपनी खबर ले लें कि हम कौन हैं ? कहाँ से आये हैं? अपना स्वरूप क्या है ? यह खबर लेने के लिए ही हमारा जन्म हुआ है। दूसरों की खबर कब तक लेंगे, राजन् ! भूल जाइये।''

राजा ने बहुत आग्रह किया फिर भी जयदेवजी अडिग रहे और उन्होंने नाम नहीं बताया। यह देखकर राजा की श्रद्धा और भी बढ़ गयी। उसने जयदेवजी को अपना गुरु बना लिया और उन्हें पंचरत्न सभा का अध्यक्ष बना दिया। कुछ समय बाद जयदेवजी की अध्यक्षता में एक ज्ञान-सम्मेल का आयोजन किया जिसमें देश-देशान्तर से कई साधु-संन्यासी, विद्वान, पंडित आदि आये।

उन डाकुओं ने सोचा कि 'एक जयदेव को लूटने से हमें इतना खजाना मिल गया तो इस सम्मेलन में तो कई साधु एकत्रित होंगे। उन साधुओं के बीच जाना हो तो साधु के कपड़े पहनना ठीक रहेगा।' वे चार डाकू साधु के वेश में पहुँचे राजदरबार में।

उस सभा में साधुओं का तो सत्कार होता था। जहाँ साधुओं का सत्कार होता था वहाँ पहुँचने पर डाकू देखकर स्तब्ध रह गये : ''अरे ! जिसका धन छीनकर हाथ-पैर बाँधकर हमने कुएँ में फेंका था वही आज यहाँ राजा से भी ऊँचे आसन पर बैठा है ! अब तो हमारी खैर नहीं। क्या करें ? वापस भी नहीं जा सकते और आगे जाना खतरे से खाली नहीं है...''

इतने में जयदेवजी की नजर उन साधुवेशधारी डाकुओं पर पड़ी। उनकी ओर निर्देश करते हुए वे राजा से बोले : ''राजन्। ये हमारे चार मित्र हैं। इनका अच्छी तरह से स्वागत कीजिए।''

अब तो वे डाकू भाग भी नहीं सकते थे। उन्हें आगे ही आना पड़ा। वे चारों काँपने लगे।

इतने में जयदेवजी ने पुनः कहा : ''राजन् ! आप मेरा सत्कार करके जो भेंट-पूजा देना चाहते हैं वह मैं तो नहीं लेना चाहता हूँ, मेरे बदले में इन्हीं को दे दीजिए।''

डाकुओं को हुआ कि ऐसा कहकर जयदेवजी हमारी पोल खोल देंगे और हमें शूली पर चढ़ना पड़ेगा।

किन्तु जयदेवजी के मन में उनके लिये सद्भावना थी। राजा ने बड़े सत्कार से चाँदी के बर्तन, स्वर्ण-मुद्राएँ, वस्त्रादि प्रदान किये। जब वे विदा होने लगे तो राजा ने सैनिकों से कहा : ''ये चार महात्मा जयदेवजी के पुराने मित्र हैं। इन्हें जरा गाँव के बाहर जंगल पार करवाकर उनके गाँव तक पहुँचा दो।''

सैनिक एवं वजीर आदि उन साधुवेशधारी डाकुओं को विदा करने गये। जंगल में वजीर ने पूछा :

''जयदेवजी के पास इतने बड़े-बड़े साधु आये, बड़े-बड़े संन्यासी आये फिर भी इतना सम्मान किसीका

''खबर लेनी ही है तो अपनी खबर ले लें कि हम कौन हैं ? कहाँ से आये हैं ? अपना स्वरूप क्या है ? यह खबर लेने के लिए ही हमारा जन्म हुआ है। दूसरों की खबर कब तक लेंगे, राजन् ! भूल जाइये।''

जहाँ साधुओं का सत्कार होता था वहाँ पहुँचने पर डाकू देखकर स्तब्ध रह गये कि: ''अरे ! जिसका धन छीनकर हाथ-पैर बाँधकर हमने कुएँ में फेंका था वही आज यहाँ राजा से भी ऊँचे आसन पर बैठा है ! अब तो हमारी खैर नहीं।''

भी नहीं हुआ, जितना आपका हुआ । अतः आप सच बताइये कि जयदेवजी आपके क्या लगते हैं ?''

डाकू तो डाकू थे। उन्होंने सोचा : 'अगर सच बता देंगे तो मुसीबत आयेगी।'

हकीकत में सत्य बताने से मुसीबत नहीं आती है। थोड़ी-बहुत आती हुई दिखती है तो पाप कटते हैं।

साधुवेशधारी उन डाकुओं ने कहा : ''जयदेव तो हमारे गाँव के हैं। वे हमारे बचपन के साथी हैं। हम एक साथ हमारे नगर के राजा साहब के यहाँ जासूसी का काम करते थे, लेकिन उन्होंने तो राजा की ही संपत्ति हड़प कर ली। रानी पर उनकी बुरी नजर थी इसलिए राजा ने उनको मारकर कुएँ में डाल देने का आदेश हमें दिया था लेकिन ये हमारे पुराने मित्र थे। हमको दया आ गयी इसलिए हमने उनको मारा नहीं बल्कि हाथ-पैर की ऊँगलियाँ काटकर उन्हें जिंदा ही कुएँ में फेंक दिया और साबिती के रूप में उनकी काटी हुई ऊँगलियाँ राजा के पास ले गये।''

पद्मपुराण में आता है : 'जिसके पास क्षमा है उसने सब व्रत कर लिये । जिसके पास संयम है, उसने सब तीर्थों में स्नान कर लिया। जिसके पास दया है, उसने सब जप कर लिये । जिसके पास संतोष है, उसने सब धन कमा लिया।'

इतना ही कहना था और उस परमात्मा से सहा न गया, जहाँ वे चारों खड़े थे वहीं धरती फट गयी और चारों जमीन में बुरी तरह दब मरे।

उन लोगों ने तो झूठ कहा लेकिन सृष्टिकर्त्ता से सहन नहीं हुआ क्योंकि जो शांत है, परहितपरायण है, उसका थोड़ा भी अगर कोई बिगाड़ता है या धोखा करता है तो ईश्वर से सहन नहीं होता है।

चारों को नष्ट होते देखकर वजीर चकित हो गया। उनको दिया हुआ सामान वापस लाया और राजा के चरणों में रखते हुए पूरी घटना सुना दी।

तब राजा ने पैर पकड़े जयदेवजी के और बोले :

''जयदेवजी ! अब तो सच-सच बताइए ! आप तो कह रहे थे कि 'ये मेरे पुराने मित्र हैं' और वे आपके लिए ऐसा कह रहे थे। उनकी बात सुनकर सृष्टिकर्त्ता से सहन नहीं हुआ और धरती फट गयी। चारों उसमें दब मरे। आप सच बताइयें कि वे कौन थे ?''

जयदेवजी : ''महाराज ! आपने बहुत आग्रह करके पूछा था तब भी मैंने नहीं बताया था। मैंने सोचा था कि उनको पैसे की कमी है इसलिए डाका डालते हैं और मुझे भी लूटा है। अगर उन्हें धन मिल जायेगा तो उनका स्वभाव सुधर जायेगा ऐसा सोचकर मैंने आपसे उन्हें धन दिलवाया। लेकिन वे नहीं बदले, जिसके परिणामस्वरूप भगवान ने उन्हें बड़ी खतरनाक सजा दी।''

जो व्यक्ति उदारात्मा है, प्राणीमात्र का हितैषी है उससे कोई अन्याय करे, उसका अहित करे तो वह भले सहन कर ले किन्तु सृष्टिकर्त्ता देर-सबेर उसे अपराध का दंड देता ही है।

संत का निंदक महा हत्यारा।
संत का निंदक परमेश्वर मारा ।।
संत के निंदक की पूजे न आस।
नानक ! संत का निंदक सदा निराश ।।

आप निश्चिंत रहो, शांत रहो, आनंदित रहो तो आपका तो मंगल होगा लेकिन अगर आपका कोई अमंगल करेगा तो देर-सबेर कुदरत उसका स्वभाव बदल देगी, वह आपके अनुकूल हो जायेगा। अगर वह आपके अनुकूल नहीं होता तो फिर चौदह भुवनों में भी उसे शांति नहीं मिलेगी और जिसके पास शांति नहीं है, फिर उसके पास बचा ही क्या ? उसका तो सर्वनाश है। दिन का चैन नहीं, रात की नींद नहीं, हृदय में शांति नहीं तो फिर और जो कुछ भी है, उसकी कीमत भी क्या ?

पद्मपुराण में आता है कि : 'जिसके पास क्षमा है, उसने सब व्रत कर लिये। जिसके पास संयम है, उसने सब तीर्थों में स्नान कर लिया। जिसके पास दया है, उसने सब जप कर लिये। जिसके पास संतोष है, उसने सब धन कमा लिया।'

जयदेव आध्यात्मिक धन के धनी थे। भागवत के श्रोता-वक्ता जानते हैं गीत-गोविंद के कर्त्ता जयदेवजी का नाम।

*

गर्भपात महापाप

- परम श्रद्धेय स्वामी
श्री रामसुखदासजी महाराज

★ जैसे ब्रह्महत्या महापाप है ऐसे गर्भपात भी महापाप है। शास्त्र में तो गर्भपात को ब्रह्महत्या से भी दुगुना पाप बताया गया है।

यत्पापं ब्रह्महत्याया द्विगुणं गर्भपातने।
प्रायश्चित्तं न तस्यास्ति तस्यास्त्यागो विधीयते॥
(पाराशरस्मृति : ४.२०)

'ब्रह्महत्या से जो पाप लगता है, उससे दुगुना पाप गर्भपात करने से लगता है। इस गर्भपातरूपी महापाप का कोई प्रायश्चित्त नहीं है। इसमें तो उस स्त्री का त्याग कर देने का ही विधान है।'

★ गर्भस्राव(सफाई), गर्भपात और भ्रूणहत्या इन तीनों को किसी भी तरह से करने पर महापाप लगता है।

★ एक कहावत है कि अपने द्वारा लगाया हुआ विषवृक्ष भी काटा नहीं जाता। **विषवृक्षोऽपि संवर्ध्य स्वयं छेत्तुमसाम्प्रतम्।** जिस गर्भ को स्त्री-पुरुष मिलकर पैदा करते हैं, स्वयं ही उसकी हत्या कर देना कितना महान् पाप है !

★ गर्भ में आया हुआ जीव जन्म लेने के बाद न जाने कितने अच्छे-अच्छे लौकिक और पारमार्थिक कार्य करता, समाज व देश की सेवा करता, संत-महापुरुष बनकर अनेक लोगों को सन्मार्ग में लगाता, अपना तथा औरों का कल्याण करता, परन्तु जन्म लेने से पहले ही उसकी हत्या कर देना कितना महान् पाप है !

★ मनुष्यों में हिन्दू जाति सर्वश्रेष्ठ है। उसमें बड़े विलक्षण ऋषि-मुनि, संत, महात्मा, दार्शनिक, वैज्ञानिक, विचारक पैदा होते आये हैं। जब इस जाति के मनुष्यों को जन्म ही नहीं लेने देंगे तो फिर ऐसे श्रेष्ठ विलक्षण पुरुष विधर्मियों के यहाँ पैदा होंगे।

जैसे, अब तक हिन्दुओं के यहाँ लगभग बारह करोड़ शिशुओं का जन्म रोका गया है। अतः वे बारह करोड़ शिशु विधर्मियों के यहाँ जन्म लेंगे तो विधर्मियों की संख्या हिन्दुओं की संख्या से चौबीस करोड़ बढ़ जाएगी क्योंकि जिन व्यक्तियों ने संततिनिरोध किया है, उनके आगे होनेवाली कई संतानों का भी स्वतः निरोध हुआ है। अगर प्रत्येक व्यक्ति की दो या तीन संतानों का भी निरोध माना जाय तो यह संख्या चौबीस या छत्तीस करोड़ तक पहुँच जाती है। विधर्मियों की संख्या बढ़ेगी तो फिर वे हिन्दुओं का ही नाश करेंगे। अतः हिन्दुओं को अपनी संतान-परम्परा नष्ट नहीं करनी चाहिये।

मुसलमान भाई तो कहते हैं कि संतान होना खुदा का विधान है। उसको बदलने का अधिकार मनुष्य को नहीं है। जो उसके विधान को बदलते हैं वे अनधिकार चेष्टा करते हैं। परिवार-नियोजन करनेवालों की संख्या कम हो जाती है। अतः मुसलमानों ने यह सोचा कि परिवार-नियोजन नहीं करेंगे तो अपनी जन-संख्या बढ़ेगी और जन-संख्या बढ़ने से अपना ही राज्य हो जायेगा क्योंकि वोटों का जमाना है। इसीलिये वे केवल अपनी संख्या बढ़ाने की धुन में हैं। परंतु हिन्दू केवल अपनी थोड़ी-सी सुख-सुविधा के लिये नसबन्दी, गर्भपात आदि महापाप करने में लगे हुए हैं। अपनी संख्या तेजी से कम हो रही है- इस तरफ भी उनकी दृष्टि नहीं है और परलोक में इस महापाप का भयंकर दण्ड भोगना पड़ेगा- इस तरफ भी उनकी दृष्टि नहीं है। केवल खाने-पीने, सुख भोगने की तरफ तो पशुओं की भी दृष्टि रहती है। अगर यही दृष्टि मनुष्य की भी है तो यह मनुष्यता नहीं है।

★ लोग गर्भ-परीक्षण करवाते हैं और गर्भ में कन्या हो तो गर्भपात करा देते हैं। क्या यह नारी जाति को समान अधिकार देना हुआ ? क्या यह उसका सम्मान करना हुआ ?

समाचार पत्रों से प्राप्त जानकारी के अनुसार हरियाणा में बीस वर्ष के बाद लड़कों को कुँवारा रहना पड़ेगा क्योंकि मादा भ्रूणहत्या से लड़कों की अपेक्षा लड़कियाँ कम उत्पन्न हुई हैं। वर्ष १९९३-९४ में ग्रामीण क्षेत्रों में ६२३३ लड़कियाँ पैदा हुई जबकि १०,८६२ लड़के जन्मे। १९९४-९५ में ११,१८६ लड़कों की तुलना में ८२६४ लड़कियाँ ही जन्मीं।

पुलिस द्वारा हरियाणा के रोहतक जिले में किये

गये अध्ययन के मुताबिक वर्ष १९९३-९४ में १०० लड़कों के पीछे ६६ लड़कियों का जन्म हुआ। इस प्रकार केवल दो-तिहाई लड़के ही परिणय-सूत्र में बँध पाएँगे। शेष को कुँआरा रहने की पीड़ा भोगनी पड़ेगी।

★ परिवार-नियोजन के कार्यक्रम से जीवन-निर्वाह के साधनों में तो वृद्धि नहीं हुई है, पर ऐसी अनेक बुराइयों की वृद्धि अवश्य हुई है जिनसे समाज का घोर पतन हुआ है।

पहले जनसंख्या कम थी तो विदेशों से अन्न मँगवाना पड़ता था, अब जनसंख्या बढ़ी तो हम निर्यात कर रहे हैं। अतः जहाँ वृक्ष अधिक होते हैं वहाँ वर्षा अधिक होती है तो क्या मनुष्य अधिक होंगे तो अन्न अधिक नहीं होगा ?

★ नसबन्दी के द्वारा पुरुषत्व का अवरोध करने से, नाश करने से शारीरिक शक्ति भी नष्ट होती है और उत्साह, निर्भयता आदि मानसिक शक्ति भी नष्ट होती है।

★ जो नसबन्दी के द्वारा अपना पुरुषत्व नष्ट कर देते हैं, वे नपुंसक (हिजड़े) हैं। उनके द्वारा पितरों को पिण्ड-पानी नहीं मिलता। ऐसे पुरुष को देखना भी अशुभ माना गया है।

★ जिन माताओं ने नसबन्दी-ऑपरेशन करवाया है उनमें से बहुतों को लाल एवं सफेद प्रदर हो गया है। ऑपरेशन करवाने से शरीर में कमजोरी आ जाती है, उठते-बैठते समय आँखों के आगे अंधेरा छा जाता है, छाती व पीठ में दर्द होने लगता है और काम करने की हिम्मत नहीं होती।

★ जो स्त्रियाँ नसबन्दी-ऑपरेशन करा लेती हैं उनका स्त्रीत्व अर्थात् गर्भ-धारण करने की शक्ति नष्ट हो जाती है। ऐसी स्त्रियों का दर्शन भी अशुभ है, अपशकुन है।

★ नसबन्दी-ऑपरेशन कराना व्यभिचार को खुला अवसर देना है, जो बड़ा भारी पाप है। पशुओं की बलि देने, वध करने को 'अभिचार' कहते हैं। उससे भी जो विशेष अभिचार होता है उसे 'व्यभिचार' (वि+अभिचार) कहते हैं।

★ परिवार-नियोजन के दुष्परिणाम भुगतने के बाद अनेक देशों ने संतति-निरोध पर प्रतिबन्ध लगा दिया और जनसंख्या-वृद्धि के उपाय लागू कर दिये। जर्मनी की सरकार ने संतति-निरोध के उपायों के प्रचार एवं प्रसार पर रोक लगा दी और विवाह को प्रोत्साहन देने के लिये विवाह-ऋण देने शुरू कर दिये। सन् १९३५ में एक कानून बनाया गया, जिसके अनुसार एक बच्चा पैदा होने पर इन्कम टैक्स में १५ प्रतिशत छूट, दो बच्चे होने पर ३५ प्रतिशत, तीन पर ५५ प्रतिशत, चार पर ७५ प्रतिशत, पाँच पर ९५ प्रतिशत और छः बच्चे होने पर इन्कम टैक्स माफ कर देने की बात कही गयी। इससे वहाँ की जनसंख्या में पर्याप्त वृद्धि हुई।

फ्रांस, इंग्लैण्ड, इटली, स्वीडन आदि देशों ने भी संतति निरोध पर प्रतिबन्ध लगाया। इटली में तो यहाँ तक कानून बना दिया गया कि संतति निरोध का प्रचार एवं प्रसार करनेवाले को एक वर्ष की कैद तथा जुर्माना किया जा सकता है। आश्चर्य की बात है कि परिवार-नियोजन के जिन दुष्परिणामों को पश्चिमी देश भुगत चुके हैं, उनको देखने के बाद भी भारत सरकार इस कार्यक्रम को बढ़ावा दे रही है। **विनाशकाले विपरीत बुद्धि !**

विभिन्न समाचार पत्रों से प्राप्त जानकारी

★ गर्भ-निरोधक गोलियों का इस्तेमाल करनेवाली महिलाओं को स्तन का कैंसर होने का खतरा है।

(इम्पीरियल कैंसर अनुसंधान-लंदन)

★ १ जनवरी १९९६ से बालिका (भ्रूणहत्या) गर्भपात पर प्रतिबंध लग चुका है। सरकार प्रसव पूर्व निदान तकनीकी (विनियमन एवं दुरुपयोग रोक) अधिनियम १९९४ बालिका भ्रूण का गर्भपात कराने के लिये अमिनोसिन्थेसिस, अल्ट्रासोनोग्राफी जैसी आधुनिक निदान तकनीकियों के इस्तेमाल की इजाजत नहीं देती।

भारत जनगणना आयुक्त की ओर से जारी रिपोर्ट के अनुसार १९८१ से १९९१ के बीच देश की मुस्लिम आबादी २ करोड़ ४० लाख से भी ज्यादा बढ़ी। देश में मुस्लिम समुदाय की आबादी अन्य प्रमुख धार्मिक समुदायों की आबादी की तुलना में तेजी से बढ़ रही है। वर्ष १९८१-९१ के बीच इसमें ३२.७६ प्रतिशत की वृद्धि हुई जबकि इस दौरान जनसंख्या-वृद्धि का राष्ट्रीय औसत २३.७९ प्रतिशत रहा।

(राजस्थान पत्रिका दिनांक : ८-११-९५)

★ गर्भपात करानेवाली लड़कियों में से एक तिहाई लड़कियाँ ऐसी बीमारियों की शिकार हो जाती हैं कि फिर कभी वे संतान पैदा नहीं कर सकतीं।

(टोरंटो, कनाडा के '७० वाले अनुसंधान के अनुसार)

★ विश्व में प्रतिवर्ष होनेवाले पाँच करोड़ गर्भपातों में से करीब आधे गैरकानूनी होते हैं, जिनमें करीब २ लाख स्त्रियाँ प्रतिवर्ष मर जाती हैं और करीब ६० से ८० लाख पूरी उम्र के लिये रोगों की शिकार हो जाती हैं। हिन्दुस्तान में अनुमानतः करीब ५ लाख औरतें प्रतिवर्ष गैरकानूनी गर्भपातों द्वारा उत्पन्न

हुई समस्याओं से मरती हैं।

(हिन्दुस्तान टाइम्स दिनांक : १५-७-९०)

★ भारतीय आयुर्विज्ञान अनुसंधान परिषद के अनुसार गैरकानूनी एवं असुरक्षित ढंग से कराये जानेवाले गर्भपात से लाखों महिलाओं की मृत्यु हो जाती है। जो बचती हैं, उन्हें जीवन भर गहरी मानसिक यातना से गुजरना पड़ता है। साथ ही, लंबे समय तक संक्रमण, दर्द तथा बाँझपन जैसी जटिल समस्याओं का सामना करना पड़ता है।

★ स्त्रियाँ गर्भपात के बाद पूरे जीवन पीड़ा पाती हैं। उनका शरीर रोगों का म्यूजियम बन जाता है। एक तिहाई स्त्रियाँ तो ऐसी बीमारी का शिकार बनती हैं कि फिर वे कभी संतान पैदा कर ही नहीं सकतीं।

गर्भपात करानेवाली स्त्रियों में से ३० प्रतिशत स्त्रियों को मासिक की कठिनाइयाँ हो जाती हैं।

★ शास्त्रों में जगह-जगह गर्भपात को महापाप बताया है। कहा है कि गर्भहत्या करनेवाले का देखा हुआ अन्न न खायें। *(मनुस्मृति : ४.२०८)*

★ लिंग-परीक्षण करवाने से अपने-आप गर्भपात होने व समयपूर्व-प्रसव होने की आशंका बढ़ जाती है, तथा कूल्हों के खिसकने एवं श्वास की बीमारी की भी संभावना रहती है। बार-बार अल्ट्रासाउंड कराने से शिशु के वजन पर दुष्प्रभाव पड़ता है।

(देहली मिड डे दिनांक : १७-१२-१९९३)

संयुक्त राष्ट्र जनसंख्या कोष की तरफ से वार्षिक रिपोर्ट में चौंकानेवाली बातें

★ विश्व में एक मिनट में एक औरत यानी एक साल में ५,२५,६०० औरतें गर्भावस्था से जुड़ी बीमारियों से मरती हैं।

★ असुरक्षित तरीके से गर्भपात कराने से प्रतिवर्ष ७०,००० महिलाओं की मृत्यु होती है।

गर्भपात निरीह जीव की हत्या है, महान पाप है, ब्रह्महत्या और गौहत्या से भी बड़ा पाप है। देश के साथ गद्दारी है। नियम लें और लिवायें कि गर्भपात नहीं करवायेंगे।

- स्वामी रामसुखदासजी महाराज

आनंद छलका देना

मेरे उर आँगन में प्रभु! अमृत रस भर देना।
उपजे भक्ति का अंकुर, श्रद्धा सुमन खिला देना॥
मेरे मन-मंदिर में प्रभु! ज्ञानदीप जगा देना।
जगे जगमग ज्योति सदा, तम अहं मिटा देना॥
मेरे नूरे नज़र में सदा, प्रभु प्यास जगा देना।
नित दर्श करूँ गुरु का, ऐसी लगन लगा देना॥
मेरे दिल की धड़कन में, गुरुनाम समा देना।
हो जप तप भक्ति निश्चल, भेद भरम भगा देना॥
मेरे रोम रोम में सदा, राम रस बरसा देना।
छूटे मोह बँधन सारा, सत्य धर्म जगा देना॥
मेरे चंचल चितवन में, प्रभु! प्रीति भर देना।
दिले दीदार हो दिलबर का, दिव्य जीवन कर देना॥
इन स्वासों के सरगम में संगीत हो सोहं का।
गूँजे गीत सदा हरि के, तन तार मिला देना॥
मेरे हृदयकुँज में सदा, प्रभु ! रास रचा लेना।
ज्ञान की बँसी बजा, जीवभाव मिटा देना॥
पलकों के साए में, तेरी छबि समाई रहे।
रहे ध्यान सदा तेरा, मेरे अवगुण भुला देना॥
'साक्षी' गुरुचरणों में, नित शीश झुका देना।
रहे मस्त फकीरी खुमार, आनंद छलका देना॥

भेंट रसीद बुक

अपने मित्रों, सगे-सम्बन्धी, पड़ौसी व अन्यों में ऋषियों का प्रसाद बाँटकर स्वयं व अन्यों को सुखी, स्वस्थ व सम्मानित जीवन जीने की राह पर अग्रसर करने के लिए, कार्यालयों, वाचनालयों, धार्मिक स्थलों, अस्पतालों, सार्वजनिक स्थलों में भी 'ऋषि प्रसाद' बाँटकर ईश्वरीय दैवी कार्य में सहभागी बनने के लिए, शादी, जन्मदिवस, त्यौहार, महत्त्वपूर्ण दिवस आदि पर 'ऋषि प्रसाद' की सदस्यता भेंटस्वरूप देकर स्वयं व अन्यों की आध्यात्मिक उन्नति में सहायक बनने के लिए भेंट रसीद बुकें बनायी गई हैं। ये रसीद बुकें आप 'ऋषि प्रसाद' कार्यालय, अमदावाद से 'ऋषि प्रसाद' के नाम से डी. डी./मनीऑर्डर भेजकर प्राप्त कर सकते हैं।

आजीवन सदस्यता रसीद बुक : Rs. 5000/- (10 सदस्य)
वार्षिक सदस्यता रसीद बुक : Rs. 1200/- (25 सदस्य)

पता : 'ऋषि प्रसाद' कार्यालय, संत श्री आसारामजी आश्रम, साबरमती, अमदावाद-३८०००५.

महत्त्वपूर्ण निवेदन : सदस्यों के डाक पते में परिवर्तन अगले अंक के बाद के अंक से कार्यान्वित होगा। जो सदस्य ५८ वें अंक से अपना पता बदलवाना चाहते हैं, वे कृपया अगस्त तक अपना नया पता भिजवा दें।

सफलता की छः कुँजियाँ

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

उद्यमः साहसं धैर्यं बुद्धिः शक्तिः पराक्रमः ।
षडेते यत्र वर्तन्ते तत्र देवः सहायकृत् ॥

'उद्योग, साहस, धीरज, बुद्धि, शक्ति और पराक्रम - ये छः गुण जिस व्यक्ति के जीवन में हैं, देव (परब्रह्म परमात्मा) उसकी सहायता करते हैं।'

मगध देश का कुमारगुप्त बड़ा दुःखी था क्योंकि बार-बार हूण लोग आकर मगध पर धावा बोलते और उसे लूटकर चले जाते। मगधनरेश का पुत्र स्कंदगुप्त अभी युवान भी नहीं हुआ था, किशोर वय में ही था। उसने अपने पिता को दुःखी देखकर कहा :

''पिताजी ! जुल्म करना तो पाप है किन्तु जुल्म सहना दुगुना पाप है। पिताजी ! अतः आप मुझे आज्ञा दीजिए ताकि मैं हूणों से युद्ध करके उन्हें पराजित कर दूँ।''

कुमारगुप्त : ''बेटा ! तू अभी बालक है। हूणों से युद्ध करना कोई हँसी-खेल की बात नहीं है।''

स्कंदगुप्त : ''पिताजी ! उम्र से या शरीर से विजय-पराजय नहीं होती है वरन् दृढ़ मनोबल ही विजय का कारण होता है एवं दुर्बल मन ही पराजय का कारण होता है।''

कुमारगुप्त अपने बेटे के दृढ़ निश्चय व सत्य युक्तियों के आगे विवश हो गये एवं उन्होंने युद्ध के लिए आज्ञा दे दी।

दो लाख सैनिकों को लेकर वह किशोर स्कंदगुप्त हूणों के देश की ओर चल पड़ा और ऐसा धावा बोला कि हूण जो माल ले गये थे उसे तो वापस लिया ही, साथ ही हूणों की राजधानी पर भी अपना ध्वज फहरा दिया। अपने पिता को भी उसने यह बता दिया कि जो अपना पुरुषार्थ करता है, भगवान उसके साथ होता है। God helps those who help themselves. Nothing is impossible. Everything is possible.

वह कौन-सा उकदा जो हो नहीं सकता ?
तेरा जी न चाहे तो हो नहीं सकता।
छोटा-सा कीड़ा पत्थर में घर करे !
इन्सान क्या दिले-दिलबर में घर न करे ?

शिवाजी ने १९ साल की उम्र में तोरणा का किला जीतकर दिखा दिया। अकबर ने १६ साल की उम्र में राजगद्दी संभाल ली थी। सिकंदर मात्र २० वर्ष की उम्र में ही विश्वविजय की पताका लेकर निकल पड़ा था। २० वर्ष की ही उम्र में महाराज रणजीतसिंह ने लाहौर का किला जीतकर बता दिया और अफगानिस्तान से कोहिनूर लाकर भी बता दिया। ज्ञानेश्वर महाराज ने मात्र १५ वर्ष की वय में ही ज्ञानेश्वरी गीता की इतनी सुन्दर व्याख्या की थी कि आज भी बड़े-बड़े विद्वान उसे पढ़कर नतमस्तक हो जाते हैं। आद्य शंकराचार्य ने मात्र १६ वर्ष की उम्र में ही शास्त्रार्थ करके पूरे भारत में आध्यात्मिकता का ध्वज फहरा दिया था।

अगर तुम भी इन्हीं ऊँचाइयों को पाना चाहते हो तो अपने में ये छः गुण बढ़ा दो : उद्यम, साहस, धैर्य, बुद्धि, शक्ति और पराक्रम। जहाँ ये छः गुण होते हैं वहाँ भगवान की कृपा तो बस, मानो पीछा ही करती है।

शाबाश वीर ! प्रतिदिन संकल्प दुहराओ कि ये छः गुण हम अपने में विकसित करेंगे।

भगवान हमारे सहायक हैं, प्रेरक हैं।

(पृष्ठ ५ का शेष)

जो जगे हैं वे ही ज्ञानी हैं।

मेरे गुरुदेव अपने उसी असंग स्वरूप को जानते हैं, मैं भी अपने शुद्ध स्वरूप को, कृष्णतत्त्व को जानता हूँ। इसीलिए हम करते-धरते दिखते हैं किन्तु करता है शरीर, हम तो केवल सत्तामात्र हैं। हमने कभी कुछ नहीं किया और उसीका यह सामर्थ्य है कि सब कुछ हो रहा है किन्तु मैं निर्भार हूँ... मेरे गुरुदेव भी निर्भार हैं।

यह स्वाँग इसीलिए रचा गया ताकि तुम भी हमारे इसी वास्तविक स्वरूप को पा लो तो सदा के लिए मुक्तात्मा हो जाओगे।''

तुलसी

तुलसी को विष्णुप्रिया कहा जाता है। हिन्दुओं के प्रत्येक शुभ कार्य में, भगवान के प्रसाद में तुलसीदल का प्रयोग होता है। जहाँ तुलसी के पौधे अत्यधिक मात्रा में होते हैं वहाँ की हवा शुद्ध व पवित्र रहती है। तुलसी के पत्तों में एक विशेष प्रकार का द्रव्य होता है जो कीटाणुयुक्त वायु को शुद्ध करता है। वैज्ञानिक मतानुसार तुलसी में विद्युत-शक्ति अधिक होती है जो कि ग्रहण के समय सूर्य से निकलनेवाली हानिकारक किरणों का प्रभाव खाद्य पदार्थों पर नहीं होने देती। अतः सूर्य-चंद्र ग्रहण के समय खाद्य पदार्थों पर तुलसी की पत्तियाँ रखने की परंपरा है।

तुलसी के पास बैठकर प्राणायाम करने से कीटाणुओं का नाश होकर शरीर में बल, बुद्धि व ओज की वृद्धि होती है। प्रातः खाली पेट तुलसी के ८-१० पत्ते खाकर ऊपर से एक गिलास पानी पीकर टहलने से बल, तेज, स्मरणशक्ति में वृद्धि होती है व जलंदर भगंदर, कैंसर जैसी बीमारियाँ पास भी नहीं फटकती हैं।

तुलसी में एक विशिष्ट क्षार होता है। तुलसी का स्पर्श व दर्शन भी लाभदायी है। यह शरीर की विद्युत को बनाये रखती है। तुलसी की माला धारण करनेवाले को बहुत-से रोगों से मुक्ति मिलती है।

तुलसीदल एक उत्कृष्ट रसायन है। वह गर्म और त्रिदोषनाशक है। रक्तविकार, ज्वर, वायु, खांसी, कृमि-निवारक है तथा हृदय के लिये हितकारी है। सफेद तुलसी के सेवन से त्वचा व हड्डियों के रोग दूर होते हैं। काली तुलसी के सेवन से सफेद दाग दूर होते हैं। तुलसी की चाय पीने से ज्वर, आलस्य, सुस्ती तथा वात-पित्त विकार दूर होते हैं व भूख खुलकर लगती है। तुलसी की चाय में तुलसीदल, सौंफ, इलायची, पुदीना, सौंठ, कालीमिर्च, ब्राह्मी, दालचीनी आदि का समावेश किया जा सकता है।

तुलसी सौन्दर्यवर्धक व रक्तशोधक है। सुबह-शाम तुलसी व नीबू का रस मिलाकर चेहरे पर घिसने से काले दाग दूर होते हैं व सुन्दरता बढ़ती है। ज्वर, खांसी, श्वास के रोग में तुलसी का रस ३ ग्राम, अदरक का रस ३ ग्राम व एक चम्मच शहद मिलाकर सुबह-शाम लेने से फायदा होता है। तुलसी के रस से जठराग्नि प्रदीप्त होती है। तुलसी का रस कृमिनाशक है। तुलसी के रस में नमक डालकर नाक में बूँदें डालने से मूर्छा हटती है, हिचकी रुकती है। यह किडनी की कार्यशक्ति को बढ़ाती है। रक्त में स्थित कोलेस्टरोल को नियंत्रित करती है। इसके नित्य सेवन से एसिडिटी, स्नायुओं का दर्द, सर्दी-जुकाम, मेदवृद्धि, मासिक सम्बन्धी रोग, बच्चों के रोग, विशेषकर सर्दी, कफ, दस्त, उल्टी आदि में लाभ करती है। तुलसी हृदयरोग में आश्चर्यजनक लाभ करती है।

तुलसी की सूखी पत्तियों को अच्छी तरह पीसकर उसका गाढ़ा लेप चेहरे पर लगाने से त्वचा के छिद्र खुल जाते हैं। पसीने के साथ अशुद्धि निकल जाने से त्वचा स्वच्छ, दुर्गन्धरहित, तेजस्वी व मुलायम बनती है। चेहरे की कांति बढ़ती है।

अनेक रोगों की एक दवा : तुलसी के २५-३० पत्ते लेकर खरल में अथवा सिलबट्टे पर पीसें, जिस पर कोई मसाला न पीसा गया हो। इस पिसे हुए तुलसी के गूदे में ५-१० ग्राम मीठा दही मिलाकर अथवा ५-७ ग्राम शहद मिलाकर ३०-४० दिन सेवन करने से गठिया का दर्द, सर्दी, जुकाम, खांसी (यदि रोग पुराना हो तो भी), गुर्दे (किडनी) की पथरी, सफेद दाग या कोढ़, शरीर का मोटापा, वृद्धावस्था की दुर्बलता, पेचिश, अम्लता, मन्दाग्नि, कब्ज, गैस, दिमागी कमजोरी, स्मरणशक्ति का अभाव, पुराने से पुराना सिरदर्द, बुखार, रक्तचाप (उच्च या निम्न) हृदयरोग, शरीर की झुर्रियाँ, श्वासरोग, कैंसर आदि रोग दूर हो जाते हैं।

कैंसर जैसे कष्टप्रद रोग में इस दवा का दो या तीन बार सेवन कर सकते हैं।

इसके सेवन से विटामिन 'ए' तथा 'सी' की कमी दूर हो जाती है। खसरा निवारण के लिये यह रामबाण इलाज है।

किसी भी प्रकार के विषविकार में तुलसी का स्वरस यथेष्ट मात्रा में पीना चाहिये।

२० तुलसी पत्र एव १० कालीमिर्च एक साथ पीसकर हर आधे से दो घंटे के अंतर से बार-बार पिलाने से सर्पविष उतर जाता है। तुलसी का स्वरस लगाने से जहरीले कीड़े,

ततैया, मच्छर का विष उतर जाता है।

तुलसी के स्वरस का पान करने से प्रसव-वेदना कम होती है।

स्वप्नदोष : १० ग्राम तुलसी के बीज मिट्टी के पात्र में रात को पानी में भिगो दें व सुबह सेवन करें। इससे लाभ होता है।

तुलसी के बीजों को कूटकर व गुड़ में मिलाकर मटर के बराबर गोलियाँ बना लें। प्रतिदिन सुबह शाम दो-दो गोली खाकर ऊपर से गाय का दूध पीने से नपुंसकत्व दूर होता है, वीर्य में वृद्धि होती है, नसों में शक्ति आती है, पाचन शक्ति में सुधार होता है। हर प्रकार से हताश पुरुष भी सशक्त बन जाता है।

जल जाने पर : तुलसी के स्वरस व नारियल के तेल को उबालकर, ठण्डा होनेपर जले भाग पर लगायें। इससे जलन शांत होती है तथा फफोले व घाव शीघ्र मिट जाते हैं।

विद्युत का झटका : विद्युत के तार का स्पर्श हो जाने या वर्षा ऋतु में बिजली गिरने के कारण यदि झटका लगा हो तो रोगी के चेहरे और माथे पर तुलसी का स्वरस मलें। इससे रोगी की मूर्च्छा दूर हो जाती है।

जलशुद्धि : दूषित जल की शुद्धि के लिये जल में तुलसी की हरी पत्तियाँ डालें। इससे जल शुद्ध व पवित्र हो जाएगा।

शक्ति की वृद्धि : शीतऋतु में तुलसी की ५-७ पत्तियों में ३-४ कालीमिर्च तथा ३-४ बादाम मिलाकर, पीसकर सेवन करने से हृदय को शक्ति प्राप्त होती है।

छोटे बच्चों के रोगों में सेवन विधि : ✲ सूखी खांसी में तुलसी की कोंपले व अदरक समान मात्रा में लेकर पीसकर शहद के साथ चटाएँ। ✲ दाँत निकलने से पहले यदि बच्चों को तुलसी का रस पिलाया जाये तो उनके दाँत सरलता से निकलते है। ✲ दाँत निकलते समय बच्चे को दस्त लगें तो तुलसी की पत्तियों का चूर्ण अनार के शरबत के साथ पिलाने से लाभ होता है। ✲ तुलसी की पत्तियों को नीबू के रस में पीसकर लगाने से दाद-खाज मिट जाती है। ✲ तुलसी की पत्तियाँ तथा सूखे आँवलों को पानी में भिगोकर रख दीजिए। प्रातःकाल उसे छानकर उस पानी से सिर धोने से सफेद बाल भी काले हो जाते हैं तथा बालों का झड़ना रुक जाता है।

✲ सावधानी : तुलसी निषेध ✲

उष्ण प्रकृतिवाले, रक्तस्राव व दाहवाले व्यक्तियों को ग्रीष्म व शरद ऋतु में तुलसी का सेवन नहीं करना चाहिये। तुलसी के सेवन के डेढ़-दो घंटे तक दूध नहीं लेना चाहिये। अर्श-मसे के रोगियों को तुलसी व कालीमिर्च का उपयोग एक साथ नहीं करना चाहिये क्योंकि इनकी तासीर गर्म होती है।

✲

(पृष्ठ ३२ का शेष)

भाइयों व बहनों की ३-३ कि.मी. लम्बी लाइन शाम के ९ बजे तक चलती रही फिर भी किसीके चेहरे पर कोई दुःख-शोक का चिन्ह नजर न आता था। जिसे देखो वह श्रीगुरुगीता, श्रीआसारामायण, 'ऋषि प्रसाद' या अन्य साहित्य पढ़ने में मशगुल था। कुछ लोग जगह जगह एकत्रित होकर पूज्यश्री के सान्निध्य में आने के उपरांत उनको हुए आध्यात्मिक अनुभवों को सुना रहे थे तो दूसरे लोग बड़े ही श्रद्धा-भाव से उन अनुभवों को सुन रहे थे। सैकड़ों श्रद्धालु भक्त लाइन में लगे दर्शनार्थियों व दूर-दूर से आनेवाले पैदल यात्रियों को नीबू-पानी पिलाने में लग गये थे। श्रद्धा, प्रेम, भक्ति का जो दृश्य आश्रम के परिसर में देखने को मिला वह अद्‌भुत था।

गुरुपूनम दर्शनार्थियों की लाइन दिनांक : १९ जुलाई को दोपहर से प्रारंभ हुई और दिनांक : २१ जुलाई की शाम तक चली।

गुरुपूर्णिमा महोत्सव में नड़ियाद, धामणवा, विरमगाँव, मुलुंड (मुंबई), सुरेन्द्रनगर, राजपीपला, बायड़, कड़ोली, आगरा व हरियाना आदि स्थानों से भी श्रद्धालुजन पैदल चलकर पूज्यश्री के दर्शनार्थ पहुँचे थे। कतारबद्ध, अनुशासित व बिना किसी कोलाहल के श्रद्धालुओं ने गुरुदर्शन कर धन्यता का अनुभव किया।

पू. बापू के आगामी सत्संग कार्यक्रम

(१) सूरत आश्रम में जन्माष्टमी महोत्सव : २२ से २५ अगस्त '९७. सुबह ९-३० से १२. शाम ४ से ६. संत श्री आसारामजी आश्रम, वरीयाव रोड़, जहाँगीरपुरा, सूरत। फोन : ६८५३४१, ६८७९३६.

(२) लुधियाना में वेदान्त शक्तिपात साधना शिविर : २३ से २८ सितम्बर '९७. **प्रथम दो दिन विद्यार्थी शिविर।** जाहिर सत्संग रोज शाम ४ से ६. संत श्री आसारामजी आश्रम, साहनेवाल- डेहलों रोड़, नहर के किनारे। फोन : ४४२२९९, ५३६०१३, ४७१७००, ४०६५५२.

संस्था समाचार

बाढ़-पीड़ितों के लिए राहत कार्य

संत श्री आसारामजी आश्रम द्वारा संचालित **मानव सेवा केन्द्रों** के कार्यकर्त्ताओं का उत्साह एवं जाति-पाति के भेदभाव को भुलाकर प्रत्येक व्यक्ति के प्रति प्रेमभाव व अपनत्व भाव देखते ही बनता था। इन केन्द्रों द्वारा विभिन्न क्षेत्रों में बाढ़-पीड़ितों की सहायतार्थ आश्रम में पवित्रता से बनाये गये भोजन पैकेटों का वितरण कार्य हुआ। मानव सेवा केन्द्रों द्वारा विभिन्न स्थानों पर हताहत होकर भूखे बैठे लोगों तक भोजन पैकेट्स पहुँचाने की सुनियोजित व्यवस्था की गई थी। आश्रम के सेवाधारी रात-दिन एक करके लोगों तक भोजन पैकेट्स पहुँचा रहे थे।

ऐसे-ऐसे बाढ़ स्थलों तक वितरण कार्य हुआ जहाँ ४-५ फीट तक पानी भरा था। जैसे अमदावाद में नरोड़ा, अमराइवाड़ी, बापूनगर, ओढव, सी. टी. एम. इत्यादि। आश्रम में ही बनाये गये लगभग २५००० भोजन पैकेट्स सबसे ज्यादा प्रभावित व क्षतिग्रस्त क्षेत्रों में वायुसेना के हेलिकॉप्टरों द्वारा पहुँचाए गये। इनमें सुरेन्द्रनगर, मेहसाना इत्यादि शामिल हैं। आश्रम के सेवाधारियों ने नड़ियाद, खेड़ा, तारापुर, गलियाना, गोलाना, मातर, भाल प्रदेश आदि क्षेत्रों में हेलिकॉप्टरों द्वारा भोजन पैकेट्स का वितरण कर मानवता का सराहनीय सेवाकार्य किया।

भाट गाँव में निराश्रित हुए उत्तर प्रदेश के २७ परिवारों के ८० लोगों की भोजन व्यवस्था प्रतिदिन आश्रम से की जा रही थी। प्रतिदिन रात को हजारों बाढ़पीड़ितों तक भोजन में खिचड़ी-कढ़ी पहुँचाई जा रही थी।

जब-जब देश में कहीं प्राकृतिक आपदा का बीभत्स दृश्य दिखाई दिया हो या कोई दुर्घटना हुई हो तो आश्रम के सेवाधारियों ने पूज्यश्री की प्रेरणा से वहाँ पहुँचकर बड़ा ही मानवीय व सराहनीय सेवाकार्य किया है और करते हैं। जैसे सूरत में प्लेग के समय आश्रम द्वारा खूब-खूब सहायता की गई थी। दरिद्रनारायणों व आपत्तिग्रस्त लोगों की सेवा के लिए पूज्यश्री के दिव्य संदेश के अनुरूप ही यह सब कार्य हो रहा है।

उनकी उजड़ी बगिया में, फिर खुशियों की बहार आई...

'मानव सेवा ही प्रभुसेवा है' इस लोककल्याण सूत्र पर चलते हुए संत श्री आसारामजी आश्रम के सेवाधारियों ने जून माह में मूसलाधार वर्षा से गुजरात राज्य में आई बाढ़ से तहस-नहस हुए एवं बुरी तरह प्रभावित पाँच गाँव सेवाकार्य के लिए गोद लिए हैं। इन गाँवों में लोग बेघर हो गये, सब कुछ चला गया, भोजन के लिए भी तरस गये ऐसे गाँवों के पुनःनिर्माण एवं ऐसे लोगों को मददरूप होने के लिए आश्रम ने सेवाकार्य आरम्भ किया है। इन गाँवों के बेघर हुए दरिद्रनारायणों को नये-पक्के घर बनाकर उनकी जिन्दगी में फिर खुशियाँ भरने का प्रयास करेंगे। मेहसाना, विजापुर व विसनगर तहसील के ये पाँच गाँव हैं : बासणा, कंसारा कुई, हेबुवा राजगढ़, देवीनापुरा एवं कोटड़ी। साथ ही साथ गाँवों में अनाज-वितरण एवं उनकी जीवन-जरूरत की अन्य आवश्यक सामग्री देने में और गाँव की सफाई इत्यादि में भी पूर्णतया मददरूप होंगे।

बाढ़ राहत सेवा कार्यों में रत मेहसाना नगर की श्री योग वेदान्त सेवा समिति के साधक व आश्रम के प्रबंधकों ने पूरी प्रोजेक्ट रिपोर्ट तैयार की और **गुजरात राज्य के राजस्व एवं राहत मंत्री श्री आत्मारामभाई पटेल** से विस्तृत रूप से चर्चा की तथा आश्रम द्वारा की जानेवाली इस प्रवृत्ति से अवगत कराया। मंत्रीश्री को बताया गया कि आश्रम द्वारा ऐसी सेवा-प्रवृत्तियाँ समय-समय पर होती रहती हैं व ऐसी प्राकृतिक विपदाओं में आश्रम विशेषरूप से आगे रहकर कार्य करता रहा है और आगे भी करता रहेगा।

समिति ने **गुजरात के मुख्यमंत्री श्री शंकरसिंह वाघेला** से भी मुलाकात की और बताया कि आश्रम की ओर से लगभग पचासों मकान बनाए जानेवाले हैं। उन्होंने मुख्यमंत्रीश्री को आश्रम द्वारा बाढ़ राहत संबंधी विस्तृत जानकारी देते हुए बताया कि आश्रम इन निराश्रितों के साथ है एवं इनको पूर्ण सहयोग एवं सहकार दे रहा है और देता रहेगा।

मुख्यमंत्रीश्री शंकरसिंह वाघेला ने प्रसन्नता व्यक्त करते हुए कहा कि आश्रम हमेशा ही ऐसी विकट परिस्थितियों में सहयोगी रहा है जो कि बड़े आनंद की बात है। उन्होंने आश्रम के प्रबंधकों को इन समयानुकूल राहत कार्यों को करने हेतु शुभकामनाएँ दीं।

✻ इन्दौर एवं दिल्ली में गुरुपूर्णिमा महोत्सव ✻

इन्दौर : खंडवा रोड़ स्थित आश्रम में दिनांक : १५ जुलाई से १७ जुलाई तक राष्ट्रसंत पू. बापूजी के पावन सान्निध्य में गुरुपूर्णिमा महोत्सव का आयोजन हुआ। पिछले ३१ वर्षों में यह तीसरा अवसर था कि पूज्यश्री ने यहाँ गुरुपूर्णिमा का आयोजन करने की स्वीकृति प्रदान की। देश-विदेश से श्रद्धालुजन पूज्यश्री के दर्शन व सत्संग-लाभ के लिये १४ जुलाई से ही आश्रम पहुँचना शुरू हो गये थे। दिनांक : १५ जुलाई को मध्य प्रदेश के मुख्यमंत्री श्री दिग्विजयसिंह आश्रम में पधारे व पुष्पमालाओं से पूज्य बापूजी का भावभीना स्वागत किया। इसके पूर्व मुख्यमंत्रीश्री ने खंडवा रोड़ पर संत आसाराम चौराहे का शिलान्यास भी किया। **मुख्यमंत्रीश्री ने अपने संबोधन में संतशिरोमणि पूज्य बापूजी से आग्रह किया कि वे बार-बार मध्य प्रदेश पधारें और परमार्थ के कार्यों से प्रदेशवासियों को कृतार्थ करें।** पश्चात् श्री सिंह ने संत आसाराम गुरुकुल आश्रम में मानवीय सर्वांगीण विकास संकुल का शिलान्यास भी किया। इस अवसर पर महापौर मधुकर वर्मा, जिला पंचायत अध्यक्ष सत्यनारायण पटेल, इन्दौर विकास प्राधिकरण के अध्यक्ष व अन्य गणमान्य नागरिकों ने माल्यार्पण कर पूज्यश्री का स्वागत किया।

दिनांक : १७ जुलाई को गुरुपूर्णिमा महोत्सव के अन्तर्गत भारी तादाद में उपस्थित श्रद्धालुजनों ने ब्रह्मनिष्ठ संत पूज्य बापूजी के दर्शन व सत्संग का लाभ लिया। पूज्यश्री ने अपने उद्बोधन में कहा : ''**तप से मन निखरता है, बुद्धि शुद्ध होकर ज्ञान प्राप्त होता है। मनुष्य को मौनरूपी तप कर अपने दोषों को बाहर निकालना चाहिये। उससे उसकी वाणी का प्रभाव बढ़ेगा।**''

महाराष्ट्र के दूर-दराज भागों से पैदल ही चले साधकों-भक्तों के काफिले ने आज एक माह उपरांत पूज्यश्री के दर्शन कर सत्संग-प्रवचन का लाभ लिया।

दिल्ली : दिनांक : १८ जुलाई को सुबह पूज्य बापूजी इन्दौर से विमान द्वारा दिल्ली हवाई अड्डे पर पहुँचे। यहाँ पर हजारों की तादाद में उपस्थित श्रद्धालुजनों ने पूज्य बापूजी को अपने श्रद्धा-सुमन अर्पित किये। पश्चात् दिल्ली आश्रम में गुरुपूर्णिमा महोत्सव के निमित्त पूज्यश्री के दर्शनार्थ पहुँचे विशाल भक्त-समुदाय ने पूज्य बापूजी के दिव्य वचनामृतों का पान किया। आश्रम व आश्रम के बाहर मुख्य हाइवे पर श्रद्धालुजन पूज्यश्री की पीयूषवाणी का पान कर धन्य-धन्य हो रहे थे।

दिनांक : १९ जुलाई की सुबह पूज्य बापूजी वायुयान द्वारा अमदावाद के लिये रवाना हुए।

✻ अमदावाद में गुरुपूर्णिमा महोत्सव ✻

दिनांक : २० जुलाई को साबरमती तट पर स्थित आश्रम में जीवन्मुक्त संत पूज्य बापूजी के सान्निध्य में गुरुपूर्णिमा महोत्सव का आयोजन धूम-धाम से संपन्न हुआ। एक महीने पहले से ही आश्रम में महोत्सव के लिये तैयारियाँ जोर-शोर से शुरू हो गयी थीं।

दिनांक : १७ जुलाई से ही देश-विदेश व दूर-सुदूर क्षेत्रों से हजारों की तादाद में श्रद्धालुगण आश्रम में आना शुरू हो गये थे। दिनांक : १९ जुलाई को जैसे ही पूज्य बापूजी दिल्ली से अमदावाद आश्रम पहुँचे, वैसे ही भक्तों की विशाल जनमेदनी पूज्य बापूजी के दर्शन व सत्संग-प्रवचन के लिये आश्रम की ओर उमड़ पड़ी। कोई बस में आया तो कोई ट्रेन में और कोई वायुयान से पहुँचा.... अलग-अलग प्रांतों से हजारों की तादाद में श्रद्धालुगण पैदल ही पूज्य बापूजी के दर्शन के लिये चल पड़े थे। दिल्ली से एक महीने पहले पैदल चले हुए ५०० साधक-भक्त अनेक जगह स्वागत-सम्मान पाते दिनांक : २० जुलाई को अमदावाद आश्रम पहुँचे व पूज्य बापूजी के दर्शन कर धन्य धन्य हुए। दिनांक : २० जुलाई को गुरुपूर्णिमा महोत्सव के पावन पर्व पर आश्रम में बड़ा मनोहारी वातावरण था। रात को १२-३० बजे से ही स्नानादि से निवृत्त होकर श्रद्धालुगण पूज्यश्री के दर्शन के लिये लाइनों में लग गये थे। घंटों बीते और जैसे ही ब्रह्ममुहूर्त की मंगल वेला में पूज्य बापूजी व्यासपीठ पर विराजमान हुए और आश्रम का पूरा प्रांगण तालियों की गड़गड़ाहट व 'हरि ॐ' के मंगल उद्घोष से गुँजायमान हो उठा। कुछ ही सेकण्डों में सभी ध्यान में निमग्न हो गये। चारों ओर शांति... सूई भी गिरे तो उसकी आवाज सुनाई पड़े। ध्यान में निमग्न लाखों श्रद्धालुगण... प्रभातकाल का शांत वातावरण... बीच-बीच में 'हरि ॐ' का गुँजन व व्यासपीठ पर विराजमान ब्रह्मनिष्ठ संत पूज्य बापूजी... बड़ा ही मनोहारी वातावरण बन गया था। सत्संग के बाद शुरू हुई दर्शनार्थियों की लाइन। दिल्ली व इन्दौर में गुरुपूर्णिमा महोत्सव का आयोजन करने के बाद भी इस पावन पर्व पर यहाँ लाखों की तादाद में दर्शनार्थी पहुँचे। इस बार पहले के सभी रेकार्ड तोड़कर सुबह से ही

(शेष पृष्ठ ३० पर)

REGISTERED WITH R.N.I. UNDER NO. 48873/91 LICENSED TO POST W/O PRE-PAYMENT : AHMEDABAD PSO LICENCE NO. 207
Regd. No. GAMC/1132, BOMBAY, BYCULLA PSO LICENCE NO. 1 Regd. No. MH/MNV-01.